# अ तु का न्त

# अतुकान्त

लक्ष्मीकान्त वर्मा



लोकोदय ग्रन्थमाला ग्रन्थाक–२६६
सम्पादक एव नियामक
लक्ष्मीचन्द्र जैन



Lokodaya Series Title No 266

ATULKANT

( Poems )

Lakshmikant Verma

Bharatiya Jnanpith
Publication

First Edition 1968
Price Rs 5 00

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन
प्रधान कार्यालय
९ अलीपुर पार्क प्लेस कलकत्ता २७
प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड मार्ग वाराणसी ५
विक्रय कार्यालय
३६२०।२१ नेता जी सुभाष मार्ग दिल्ली ६

प्रथम संस्करण १९६८
मूल्य ५ ००

सन्मति मुद्रणालय,
वाराणसी ५

श्री हरिमोहनदास टण्डन को—

जो मेरे क्षण प्रतिक्षण के
संघर्षों के
साक्षी रहे
हैं।

# अपनी ओर से

•

मेरी यह दृढ धारणा रही है कि किसी भी काव्य-सग्रह की भूमिका में शास्त्रीय विवेचन नही होना चाहिए। इस से काव्य के प्रति अतिरिक्त आग्रह या अनावश्यक विषयान्तर पडता है। लेकिन फिर भी यह आग्रह मेरे कुछ मित्रो का बराबर रहा है कि सग्रह के साथ एक लम्बी भूमिका का जाना जरूरी है। बार-बार सोचने के बाद भी मैं अपनी पूर्व धारणा नही बदल पाया हूँ। आशा है, मेरे मित्र मुझे क्षमा करेंगे।

•

इन कविताओ के विषय में मुझे इतना ही कहना है कि यह मेरी व्यक्तिगत अनुभूतियो का सग्रह है। कही-कही इस में पूरा परिवेश हमारे साथ रहा है, कही-कही मैं बिल्कुल अकेला रह गया हूँ। जहाँ परिवेश ने मेरी अनुभूति को गहराई दी है वहाँ मैं उस का ऋणी हूँ लेकिन जहाँ मैं बिलकुल अकेला रह जाता हूँ वहाँ किसी को दोषी नही ठहराता क्यो कि अन्ततो गत्वा सब छूट जाते है। केवल कवि का व्यक्तित्व और स्थितियो का गहनतम दबाव—यही दो शेष बचते है। उस साक्षात्कार की अभिव्यक्ति कठिन भी है और जटिल भी और यही कवि के व्यक्तित्व की परख भी होती है। मैं उस का निर्णय आप पर छोडता हूँ।

•

जीवन में जो कुछ भी है, न तो वह सब का सब सग्रहणीय है और न सब का सब त्याज्य। इसी लिए स्वीकृति और अस्वीकृति के विकल्प में ही व्यक्तित्व की भी परख होती है। मैं नही जानता कि मेरी स्वीकृति और अस्वीकृति में वह अर्थ है कि

नहीं। चेष्टा मेरी यह अवश्य रही है कि विकल्प में मैं स्वतन्त्र रहूँ और अभिव्यक्ति में समग्र। निर्वाह क्षमता से ऊपर है। आदतन मैं अगम रहा हूँ।

●

ऋणी हूँ उन सब का जिन्हों ने मुझे मेरी कविताओं की सहानुभूति दी है। ऋणी हूँ मैं 'परिमल' प्रयाग का, जिस संस्था ने मुझे पिछले १६–१७ साल से बहस-मुबाहिसे में, बातचीत में गोष्ठियों में, मेरी ज़िद को मेरे ऊबड़-खाबड़ विचारों को, भावों को सुना है, अपनी प्रतिक्रिया दी है। मैं अपने कर्त्तव्य में चूकूँगा यदि बिना इस स्वीकृति के संग्रह को प्रकाशित होने दूँ। मैं जो कुछ भी हूँ उसी की देन हूँ।

●

अन्त में मैं आभारी हूँ श्रीमती रमा जैन और भाई लक्ष्मीचन्द्र जैन का जिन्हों ने अनेक आग्रहों के बीच इस संकलन को प्रकाशित किया है। मेरी हर ज़िद मानी है और इस का वर्तमान रूप प्रस्तुत करने में योग दिया है।

—लक्ष्मीकान्त वर्मा

सरयू कुटीर मधवापुर
इलाहाबाद
२० सितम्बर १९५८

# अनुक्रम

● एक दर्द और कई परिवेश



● रेत के फूल रेत के बिम्ब

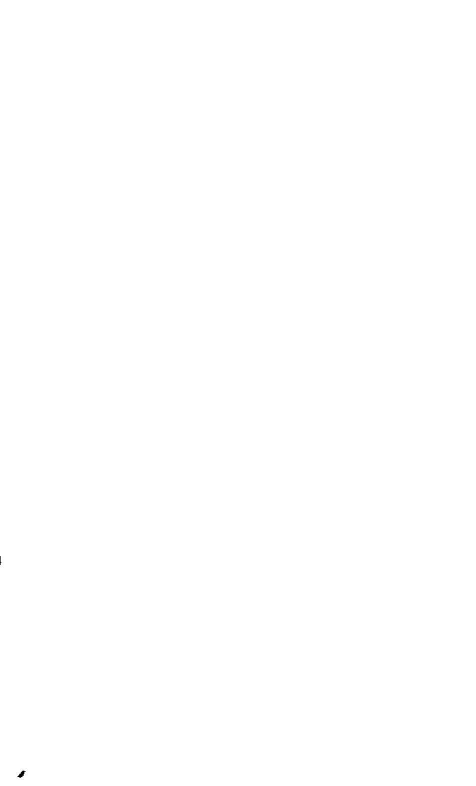


● कुछ गलत कविताएँ



● अतुकान्त

# अतुकान्त



क्यूरियो मार्ट

## एक लघु अस्तित्व की सार्थक माँग

ओ सत्य मेरे
सहज के आक्षेप से वचित
चिर सजग अभिजात !
यह विफल अवरोध
जिस मे बस गया ठहराव
एक से चेहरे
कही भी नही कोई अलगाव
भीड मे खोये हुए
पर भीड से भी मुक्त
मुक्ति के अस्तित्व के सम्मान
[ हर नयी सम्भावना के
चिर सजग प्रतिमान ]
तुम स्वय मेरे अश के स्वाभिमान
स्वय मुझ मे  ढूँढते मुझ को
स्वय मुझ से  पूछते मुझ को
स्वय मुझ से जूझते-टूटते
स्वय मेरे खण्ड से बनते
हर नये क्षण के
सृजन-अवतार
तुम अकेले
सम्भाव्य के, उपलब्धि के
सजग शिशु अभिजात
सत्य से सम्पृक्त
विद्रोह के चिर साक्ष्य
अनुभूति के अनुताप मे
तपते-सीझते

समय के प्रति खण्ड में सम्पूर्ण ।

एक कागज की मीनार में
बैठे हुए हम सब
एक बढते हुए ज्वालामुखी में स्थिर
हर क्षण अग्नि के, सागर के—
ज्वारो का झेलते
हर दश म बचते
हर अंश में पनपते
मौन
सकेत
सकेत
इतिहास ?
नही
वतमान
तादात्म्य
के
औदात्य

विवेक से गिलते
उत्सर्गित
आत्म-सकल्प से
काटो के बीच हँसते
    दो चट्टानो के बीच
    हरीतिमा-से पनपते
असीम मरुस्थल मे
दूव-से उगते
    गहरा अन्धकार से
    एक किरण बन पसीजते
मेले मे
भूला हुआ

बार-बार अपने बायें हाथ से
दाये हाथ मे चुटकी काट
अपने को बार-बार पहचानते

हर घटना-दुर्घटना के साथ
अपने को जोडते, भोगते
असम्पृक्त हो
टूट कर अलग हो
पनपते
नही
नही खपते
सशय
दुविधा
आहट
अकुलाहट
परिचित
अपरिचित
जीते, जागते, भोगते सारा परिवेश
फिर भी रिक्त नही होते ।

वह अश
सम्पूर्ण
लघु परमाणु
अद्वितीय
अभिजात
अत्याज्य

एक सज्ञा का सर्वनाम
एक नया आयाम

आदमी नही एक अधकुतरा फल, फेका हुआ, बिका हुआ अध सत्य ।
आदमी नही एक तडपता, छिपकली के मुह से छूटा, अधजीवित
सन्तप्त अर्धभाग ।
आदमी नही एक छटपटाता, बेचैन, अधसशय का अभियोग ।
आदमी का सत्य नही इतना पराश्रित

है वह आत्म लब्ध
सम्पूण
सघन घनत्व का
परमाणु ।

एक विन्दु रश्मि-वृत्त
एक पखुरी गुलाब की
एक ज्योति रेख
फेनिल तमम्मित जलधि की
एक चेतना-आलेख
सूली पर उत्सर्गित
एक इच्छा शक्ति
जिजीविषा मट्ठी मे कसी

एक अनुभूति
बार-बार
हर उपलब्धि के बाद
बच रहने की ।

अवशेषो को भोगता—
कतराता नही,
साक्षी है प्रलय का—
पर विलय म डूबता नही
हर अनर्गल अपवाद को सहता—
पर मजबूर नही
हर व्यग्य म जीता—
पर खीझता नही ।

है,
इस लिए होता है ।
और इस लिए खोता नही
एक तम-पट्टिका पर गहरी रेखा सा वतमान, व्याप्त
सन्दभ के मम-सा अदृश्य परिव्याप्त

एक महान् फलक पर
अकेला एक बि दु
समूचे शून्य को अपने अस्तित्व म सँजोता

अपनी लघुता से फलक का विस्तार प्रेषित करता
हर आकृति के अस्तित्व को सन्तुलित करता
सम्पूर्ण व्याप्ति का साक्षी
पर अपने म पूर्ण
चेतन, अखण्ड, प्रवहमान
दीप्त
स्व युत
अ-महान्।

प्रश्न,
विज्ञ,
आत्म स्थित
क्रियाशील
यथार्थवाही
निश्शक
प्रबुद्ध—
परछाइयाँ
परछाइया ही परछाइयाँ
परछाइयो मे खोये अस्तित्व
हमारे व्यक्तित्व की इकाइयाँ
ज्योति और अस्तित्व के बीच की गहराइयाँ
अरूप व्यक्तित्व की
कुरूप स्थितियो की
गहरे सवेदन की
अपूर्व स्पर्शो की
विस्थापित अर्थो की।
और वह
जो हम सब मे है
पुजीभूत, स्वतत्र सकल जो सब का है
मुझ मे आरोपित होता है
परछाइया छन कर गन्ध बनती है

अस्तित्व स्पर्श बोध मे बनता है तादात्म्य सत्य
इकाइया शून्य मे घुल कर
एक व्याप्ति से परिव्याप्ति तक
केवल विभा के झीने आवरण मे
हमारे वृत्तो के बीच व्याप जाती हैं
और तब
धुएँ के सागर मे
केवल एक गहरी कडुआहट को पीना
हम सब के समुचित व्यक्तित्व का
अर्थहीन हो जीना
कडुआहट अपने म ही एक अर्थ है
सम्भाव्य है उस सन्तुलन का
जिस को अभिव्यक्ति
एक नयी अभिरुचि मे
अवतरित हो
हम परिशोधित सन्दर्भों से जोडती है
तोडती है अयाचित, असन्तुलित अशो से
और यह टूटने की पीडा
सृजन की पीडा
सन्दर्भों से अलग
अकेलेपन की पीडा
सवेदना है
हमारे वृत्तो के अर्थों की ।

हम
जो भोगते है हर स्थिति असहाय से, निरुपाय-से
झेलते ह हर परिस्थिति दीन, व्याकुल अनिवाय-से
और वह
जो हमारी पीडा मे, सशय मे, शका मे
बनाता है हमे विक्षिप्त, तरल, फेनिल उच्छ्वास
हम है उन के भोग्यार्थ नही ,

क्यो कि असहायता, निरुपायता, अनिवार्यता
सशय, शका, विक्षिप्तता की व्याकुलता
वह केवल मेरा नही
उस मे वे सब है
जो मेरे ही समानधर्मा है
मुझ से अदृश्य
किन्तु मुझ मे ही प्रतिफलित
आदमी की मर्मान्तक अभिव्यक्ति
कभी कभी मौन, मुखर के अतिरिक्त
केवल मुद्रा मे हो जो लेती है।

मुद्रा
एक टूटी पखुरी
फूल से लगी नही
फूल से गिरी नही
फूल की भी नही
फूल से विलग नही
आदमी और उपलब्धि के बीच की यह स्थिति
मात्र एक पखुरी की भी होती है
जिस की मुद्रा म सम्पूर्ण फूल का
अस्तित्व सार्थक हो उभरता है।

अस्तित्व
वह एक किरण
जो अन्धकार की नही
किन्तु अन्धकार से बची नही
अन्धकार मे उगी, पनपी, बढी
किन्तु अन्धकार की बनी नही
आदमी एक समवेत चोट मे टूटा-फूटा नही
अपने और अपने होने के बीच
वह समूचा चूर-चूर हो खडा रहा ढहा नही
यह अनुभूति

अकेले किरण की नही
सम्पूर्ण अन्धकार की है
धधक्ते प्रकाश की धडकन से
जजरित अन्धकार की है।

और वह एक किरण
वह एक दृष्टि
जो मेरे दो हाथो मे असरय हाथ उगा देती है
मेरे दो चरणो मे असख्य चरणो की गति भर देती है
जिसमे इन विरामो की मौत
अर्धविरामो की अस्तित्वहीन सासें
शून्य मे प्रवाहित आत्माएँ
पूण आहुति की कँपती, ठण्डी समिधाएँ
एक ऐसी छोटी-सी अनुभूति दे जाती है
जिस के अस्तित्व मे सम्पूर्ण व्यक्तित्व की मुद्रा
विश्व चेतना का अकुर बन
'सर्वभूतेपु' की सज्ञा दे जाता है।

और तब मेरी अपनी लघु स्थिति मे
वह सब कुछ है जो ऋजु है, पावन है, मगल है, शुभ है
किन्तु वह भी है जो रौरव है, गलित, वीभत्स, कुरूप, अपरूप है
वह भी है जो प्रत्येक क्षण प्रलय की ओर वढता क्षयी है
वह भी है जो चिर विध्वस मे एक मगल-सूत्र-सा अक्षय है
वह भी है जिस के आभा मण्डल मे असरय सौर मण्डल हैं
वह भी है जिस के अस्तित्व से बँधा धूमकेतु अमगल है
वह भी है जो है विघटन, विपयय, विसर्जन, लाछन, व्यग्य, अपन्ना
वह भी है जो है सगठन, सक्षम, सम्बोधन, सचरण आह्लाद,
किन्तु मैं दोनो का साक्षी
दोनो का भोक्ता
दोनो से विलग व्यक्तित्व हूँ
अपनी सहज लघुता के परिवेश मे
अपने सौर मण्डल से प्रदीप्त केन्द्रस्थित, अपरिहाय, अनिवाय,
मेरी अपनी लघुता है रक्षणीय
इस विलग होने की स्थिति मे वह है फूल की गन्ध

किरण की मौत, अन्धकार की प्रवृत्ति, प्रकाश की शक्ति
वह देखता है पखुरी के—
विलग होने मे, सम्पूर्ण फूल का उत्सर्ग
किन्तु एक अदृश्य, अक्षुण्ण पुष्य का गन्धरूप
वह देखता है
एक किरण मे उगता सम्पूण सूर्य
एक कदम मे डूबी सम्पूण पृथ्वी की गति
एक हाथ मे उगी सम्पूण ससृति
जिस मे मै ही भोगता और मै ही भोगा जाता हूँ
मै ही सहार करता हूँ अपना किन्तु मै ही वनाता हूँ
क्यो कि
मै अपना मै नही
किसी महान् का उच्छिष्ट मै नही
किसी सम्भाव्य की अनुक्रमणिका नही
किसी समाप्ति का समापन-चिह्न नही
मै हूँ अपने ही लघु अस्तित्व से जन्मा
व्यापक परिवेश का साक्षी और साक्ष्य

प्रज्ञ
विज्ञ
आत्म स्थित
क्रियाशील
यथार्थवाही
निश्शक
प्रवुद्ध
मेरी लघुता है परमाणुवाही सार्थकता
क्यो कि
मै अपना मै ही नही
मै तुम्हारा—तुम सब का हूँ
आत्म-स्थित
क्रियाशील।

## ठण्डा स्टोव, चाय का टिन और खाली बोतल

स्टोव आज ठण्डा है
हलकी सतरगी चूडियो की छाया
धानिया चूनर मे लिपटी तुम्हारी काया लक्ष्मी, सावित्री, दमयन्ती, वेटर हाफ
केश विच्छिन्न आर्द्रा के बादल-से नम सीले, घर ऊपर ऑफ
धुएँ से भरी आखें स्वाती-सा पलको मे कृपालु हस के पखा पर साफ-साफ
पसीने की बूँदो मे लिपटा सुहाग-टीका ऊषा, मजूषा, जैसे अरुण हिम गल जाय
माँग की सिन्दूरी लकीर प्रवाल-द्वीप जैसे पिघल जाय
लाल डोरियो म खिची पुतलिया बेबस मजबूर जैसे सीता की आखे अशोक वन मे
रात की लोरिया तुम्हारी प्रिय जैसे सवार की ओस अकुर के मस्तक पर मणि मुकुट

तुम
इतनी खामोश रस मे
सच बोलो
बस
महज इतनी बात मैं जानना हूँ
आज वह बीता रम, पिया विप, जिया दश
तरल हो गया कही
क्यो कि महीने की आखिरी तारीख है हर दिन
जिन्दगी यूँ ही बीती है प्रिय छिन छिन
एस्थेमा के रोगी-सा यह स्टोव

और उस की आवाज
दुघटनाओ की लम्बी तारीख अनगिन

माँ चा ऽ ऽ ऽ की ऽ ऽ ऽ प्याली
पा पा ऽ ऽ ऽ की जेब खाली
स्ले ट की पर्त काली
ले ऽ ऽ ऽ ट
फी ऽ ऽ ऽ
नाम स्कूल से कट गया
मा ऽ ऽ ऽ
फा ऽ ऽ ऽ
स ऽ ऽ ऽ

श श श
स्टोव आज ठण्डा है
पापा की कविता जिन्दा हे !
चा का टिन खाली
खाली मर्यादा की लाज-सा
केवल फल का प्रतीक-सा
आज वह महर्षि वाल्मीकि ह
खाली है
जाली है
उस पर का नारगी रग
चादी का वक
एयरटाइट पैकिग
स्पेशल लेवल
सच्चा ट्रेड मार्क
'नक्काला से सावधान'
छि

य उदास घाटी म भटकती बूंद
टगमग कदम प्रिय
भीगा आंचल
घुटन म घुटती रातें
क्या कि मैं,
जो तुम्हारा पति भगवान
लक्ष्मीकान्त
राम
राम राम
मरघट मरम की कुदाली से
चाय की गीली पैन रखे
निधि धाम !
माँ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ
रात मैं राजकुमार था
हिरन मार लाया था
शेर के दांत तोड लाया था
मैं हूँ भरत
तुम शकुन्तला
कहा है दुष्यन्त मा ?
यह है तीर तरकस म
सभी विष के बुझे खाली
श श श श
चाय का टिन आज खाली है
साहित्य-दुर्वासा का महा शाप
ओ भरत
सहन कर
चुपचाप !

और शराब की बोतल
मद्य निषेध का सरकारी पोस्टर
शराबी पिता नशे में चूर मदहोश

बच्चे सहमे सिमटे
मा
माता जीर्ण वस्त्रा
मुक्त अलका
उदास
खामोश

हर पहली तारीख—एक चोख
हर आखिरी तारीख—एक भाख
हर मास का अलविदा—विदा
हर सुबह एक लीक
घनी शाम का प्रतीक

ओ प्रिय
मैं बिना बोतल का शराबी
मदहोश कलाकार सही
काया-कल्प की आशा से
कर रहा उपवास सही
तुम दमयन्ती-सी
सो जाओ निजन वन मे
मैं जो हार चुका सब कुछ नशे मे
मछली नही भूनूगा
सारथी नही बनूगा
मद्य निषेध से ले कर—मेरे इस नशे तक
मैं हूँ
मैं एक छोटा किन्तु जागरूक अस्तित्व
मैं ही नल हूँ
अजगर-सा चाय की पत्तियाँ निगलता हूँ
मैं ही अपने विष से स्टोव का ठण्डा कर जीता हूँ
मैं ही शराब की बोतल ले
रामायण से गीता तक जीता हूँ
मैं लक्ष्मीकान्त, सत्यवान, नल, दुष्यन्त, आक्रान्त

मैं जो क्षण-क्षण जन्मता हूँ मरता हूँ
मैं जो दुर्वासा का शाप पी फिर भी नही भूलता
तुम्हे
तुम्हारे भग्न को
उस विष बुझे तीर को
सुहाग की पीर को
ओ प्रिय मैं ही हूँ भुक्त और भोक्ता
मैं ही हूँ साक्षी और साध्य।

दुष्यन्त की अँगूठी को
इस युग में मछलियाँ नही निगलती
वह बन्धक धरी जाती है
कोई मछुआ
मछली के पेट से अँगूठी ले राजद्वार नही जाता
भगवान् का दिया कभी नही लुटाता
लुटाता हूँ मैं
भूख
प्यास
दैन्य
रोग
केवल इस लिए
कि तुम्हारी सतरगी चूड़ियाँ
धानिया चूनर
माग का पिघलता प्रवाल-द्वीप
सुहाग का टीका
अलस पलक
सघन केश
ये सब के सब
गेमास और रोटी तक नही रहते
हृदय और दृष्टि तक नही थमते

तूफान से उठते-जीते
ओ प्रिय
ये मुझे धरती की सोंधी महक
धुएँ की वृत्ताकार सीमा से दूर
कहीं छोड छोड आते हैं
यह ठण्डा स्टोव
खाली चाय का टिन
शराब की बोतल
ये सब के सब
छोटे ही सही
छोटी प्रेरणाओं मे प्राण दे जाते हैं

स्टोव यदि आज ठण्डा है
तो कहीं आच यह मन की
इतनी उबरा है
दर्द को जन्म दे
जो दे जाती है सहन
सम्बोधन
समर्पण
मौन
सर्पण!



## क्यूरियो मार्ट मे अर्जुन की तलाश करते श्रीकृष्ण

हर चीज पर खुदी हुई कीमतें, तारीखें, दिन, घडी
लेवल, रग, जोड, पॉलिश की पपडी
टँगे हुए शीशे, चित्र, मूर्तियो के बीच यहाँ
अकित वैचित्र्य मे केवल अनासक्त
मैं हूँ
मैं
सारथी पाथ का
अपने विराटत्व मे जन्मा
अपना ही सक्षिप्त रूप

ओ कुरुक्षेत्र
ओ महासमर के ध्वसशेप
कहाँ हूँ मै
कहा है अर्जुन
कहा है उसकी व्याकुलता
आस्थाहीन विवशता
कहा हैं ज्ञान, धम, काम, मोक्ष की सीमाएँ
कहाँ है मेरी स्थापित मर्यादाएँ
कहा हैं ?
कहा है ?
कहा हैं ?
इस अजायबघर मे
मूर्तिवत् मेरा अस्तित्व सुडौल गढा गढाया
जडवत् मेरा बोध करीने से सजा-सजाया
मूढवत् मेरा विराटत्व चाँदी की डिबिया मे धरा धराया

रसोद्रेक से पूर्ण, धूमालिप्त, धुंधली-सी काया
जर्जरित, टूटा-सा राधा का रूप यह—
मैं भी तो नहीं पहचान पाया
ओ मेरे भावबोध
कहा है मेरा वह विवेक-भान ?
कहा है मेरा विश्व-कल्पित चित्र-ज्ञान ?
पहिया वह—जिसे मैंने भीष्म के विरुद्ध गतिशील चक्र दे उठाया था
सोने के फ्रेम मे मढा पुरातत्त्व का शेष है
बाँसुरी मेरी 'नॉट फॉर सेल' के नोट से सन्त्रस्त है
गाण्डीव की प्रत्यचा मरे हुए सर्प-सी बोतल मे बन्द है
तूणीर के तीर जो अग्नि-साक्ष्य से भरपूर थे पेपरवेट से दबे हुए मन्द है
जिसे मैंने आत्म-बोध से उद्वेलित हो गीता के रूप मे गाया
वह आज अवशेष धर्म-ग्रन्थ है
कर्ण का कवच-कुण्डल 'छुओ मत' की चिप्पी का पैवन्द है
द्रौपदी का चीर उतरते हुए वस्त्र-सा गुदडी बाजार मे स्वच्छन्द है
कुन्ती का अनस्तित्व केवल कलक है
ओ दिवा
ओ स्वप्न
ओ सत्य

कहाँ है
कहाँ है अर्जुन का वह श्रद्धालु रूप
कम्पित कर कवच क्लिष्ट
भ्रमित इष्ट—
उत्तप्त आँखो की सजल अभिव्यक्ति
कहाँ हूँ मैं
कहा है अर्जुन
ओ कुरुक्षेत्र
कहाँ हूँ मैं ?

कौन है ?
आहट यह किस की है ?
जीर्ण हाथ
पोली छाती
खोखली आवाज
पथरायी आँखें
झुकी रीढ़
गाण्डीव धनुष-सा स्वयं ही झुका झुका
हाथ में परमिट
आख में स्थिरता लिये
इस दुकान पर मौन पंक्तिबद्ध !
प्रत्यंचा की डोर को राशन की दुकान पर
खरीदता अर्जुन यह किस का है ?
कौन है कृष्ण इस अर्जुन का
मैं तो हूँ उस का
जिस ने गाण्डीव धर दिया था
कुरुक्षेत्र के बीच
(यह तो जूझता, लड़ता बिना अनास्था, बिना कृष्ण का अर्जुन है)
मेरा विराटत्व जन्मा था वहा
जहाँ जहरीले संशय ने डसा था सारा विवेक
( यह विराटत्व की भावना लिये वामन-सा मौन है )
अर्जुन यह किस का है ?
किस का है ?
किस का है ?

यह तो हर विष को स्वयं पिये
शान्त
मौन
नि स्पृह
विज्ञ सा स्वयम्भू
भोग में तपा सधा

अयाचित वनवास का
आतप यह झेल चुका
झेल चुका सारा विष-गन्ध-वास
आखो मे आत्म वेदना की किरण-लौ
मेरे विराटत्व से भी अधिक धधकती
प्रज्वलित, चमकती, ज्वाला यह स्वय है
सुनो
सुनो
सुनो
मैं नही कृष्ण इस अर्जुन का
यह तो है स्वय वह मृत्तिका पिण्ड
जो इस्पात को झुकाता है
मैं यहा कहाँ हूँ
कहा हूँ
कहाँ हूँ
इस अजायब घर के दरवाजे
खिडकी, रोशनदान
सग्रह किये धर्म-ग्रन्थ
चित्र, कलमदान
चार मास का बछडा
चौमुहा बकरा
छह टागो वाली चिडिया
दो सिर वाले मनुज
अस्थि की आत्मा   विसर्जित ऑफिस टेबल का कागज
आत्मा की अस्थि   वेस्ट पेपर बॉस्केट
रम्भा के घुघरू   कालवेल पर दौडने वाले चपरासी
इन्द्र के वज्र   काठ की डचो-खानो वाली पटरी
नारद की वीणा   वेश्या के कोठे पर अकृत सारगी
शकर का नाग   पिटारे म बन्द स्थिति की लाचारी
यह सब क्या अचरज है
ये सभी तो सुरक्षित हैं
सुरक्षित नही रह सका किन्तु

अर्जुन वह
बदल गया रूप रंग
अस्तित्व-बोध
सभी कुछ बदल गया
राशन की दूकान पर द्रौपदी का चीर
कट-छँट कर महज चार गज अड़तालीस इंच
गाण्डीव का वज्र   केवल हाफ पौण्ड
प्रत्यंचा   केवल एक फुट इलैस्टिक
कर्ण कुंडल   केमिकल गोल्ड
गीता और न्यूज प्रिण्ट
व्यास आज का   केवल क्यूरेटर
        गणेश   पटवारी
    कृष्ण और कृष्णमाचारी
        कुछ समझ में नहीं आता
            ओ व्यास
            ओ अर्जुन
            ओ कुरुक्षेत्र
    कहाँ हूँ मैं ?
    मैं यहाँ हूँ ?
        यहाँ हूँ ?
        कहाँ हूँ ?

मैं हूँ
मेरी आवाज है
अजायबघर, क्यूरिया मार्ट
दिखावे का नया आर्ट
    अर्जुन की काट-छाँट
    दुर्योधन की नयी बाट
हर खाने जुए के बिके हुए
हर कौड़ी फँसी हुई

जग लगी सुई की नोक कटी हुई
पृथ्वी की छाती की पर्त-पर्त बँटी हुई
अन्धी गलियो मे युधिष्ठिर की आत्मा
भीम की नपुसकता बन अटी हुई

ओ अर्जुन
गाण्डीव को गिरवी रखने के बाद
तुम किस पर हो टिके हुए
क्या तुम भी हो बिके हुए—निके हुए!



## विषकम्भक

रस तो ले गये वे गन्धवाही योगी सब
जो आये थे केवल कलाकार से, नट से, बाजीगर से,
अभी अभी
ओ विषकम्भक !

वे हैं कवि,
भावना-लोक मे रहते हैं
जितना है कोमल सब उन का है
जितना है मधुर सब उन का है
जितना है तरल, स्नेहिल, सलिलमय, सब उन का है
वें चाहते हैं देखना महज वह जो सुन्दर हो
वे चाहते हैं जीना वह जो स्पर्शों से रोमांचित कर दे तन-मन
वे हैं उन के कवि जो गन्ध, पुष्प, रजताभ नक्षत्रो मे जीते है

एक लाडला गुलाब
वे पाल लेते हैं
गमलो मे रक्त की खाद दे
असख्य पत्तियो, कलियो को चुटकी में मसल
उगा लेते है एक गुलाब
जिस मे सप-से बैठे
गन्ध पी
केवल विष की तिक्तता देते है
हमें तुम्हे, इन्हे, उन्हे
ओ विषकम्भक वे है कवि ।

कवि मै नही
क्योकि मैं कोमलता से दूर कठोरता म जीता हूँ

क्योंकि मैं मधुरता से वंचित विष की तिक्तता पीता हूँ।
जितना था तरल वह आँसुओं में बह गया।
जितना था स्नेहिल वह विपर्ययों में चुस गया।
जितना था सलिलमय वह ले गये अभिभावकगण।
मेरी दृष्टि भिखारी की झोली में एक सूखी रोटी पर आँख
उग आने के सपने-सी।
मेरी प्रवचना सैनिक की आँखों पर अन्धी रोटी की पट्टी-सी।
मेरी श्रद्धा मजदूर की भवों में पसीने की बूँदों का गंगाजल पी
मैं जो लिखता हूँ वह कविता नहीं है
वह है—
जीना
और जीना—
असुन्दर की छाया में
पसीने की बूँद में
रोटी की विवशता
और कीचड़ की होली में
चला जा रहा हूँ मैं
अपरिचित लीक से पृथक् नहीं
किन्तु कहीं तपता, सीझता, उगता!

ओ विपकम्भक
मैं वह स्थिति हूँ जिस में नहीं कुछ शेष।
केवल प्रवाह है प्रवचना का,
केवल दाह है दुर्घटना का।
यही तो जीवन है,
इसीलिए मरा नहीं।
भोगता हूँ—भोगी हूँ!

■

# एक मृतात्मा की वसीयत

ओ माँ !
यह सब तुम्हारे स्नेह के आधार पर जीते हैं
कड़ुआहट, तल्खी, तीखी मारी बेबसियाँ ।

महज इस खाल में भूसा भर कर
आँखों में कौड़िया लगा
कानों में सीपिया लटका
केवल इसीलिए मुझे तुम्हारे पास खड़ा करते हैं
ताकि तुम सड़ी, सूखी, प्राणहीन खलरी चाटो
अपना अमित स्नेह ले
अपनी बेरस आखो से मुझे ताको
और भर दो
इन सारे के सारे स्नेह के पिपासे मुरदो के स्नेह-पात्र
इसलिए कि तुम माता हो
शुचि स्नेहयुक्त स्निग्ध पयमयी, रसपूर्ण वात्सल्य की प्रतिमा हो
ओ मा
यह सब तुम्हारे स्नेह पर जी लेंगे
क्योंकि ये महज जीते हैं
ये रहते नही !

भर दो
इस त्वचा की मृतात्मा की सूखी ठाठर मे
वह घास-पात, कूड़ा-कबाड सब कुछ भर दो
लगा दो इन नकली कौडियो की आखे
मेरे माथे के नीचे के गोलको मे लगा दो

काना मे सीपिया
खपाचिया पैरो मे
तारकोल, नेप्थलीन की गोलिया भर दो
मेरे इस हृदयहीन धमनीहीन, स्नायुहीन काया मे
सभी कुछ भर दो
ताकि मैं रस-स्निग्ध पयमयी माता के निकट
अपनी चेतनाहीन पूँछ को एक स्थिति मे उठा
उस के वात्सल्य को, हृदय को, आकर्षण को, चेतना का
सब को उभार दूँ
और तुम इस मुरदे के उपजाये स्नेह को निचोड कर
जीवित रहो
जिन्दा रहो!

ओ मा
सच मानो, मुझे दीमक नही छुएँगे
नही पास आयेगी चीटी, चूहा—
नही कुतरेगा बहेलिय का कुत्ता मुझे
नही देखेगा कोई भी हिंसक
क्योकि मैं मर कर जीवित का अभिनय हूँ
केवल एक स्थिति हूँ
जिस पर रचना की देहली माथा टेक
हार मान सो जाती है
इसलिए दो
ओ पयमयी, रस स्निग्ध ज्वारा की मूर्त
इस सब को दो मेरा वह स्नेह
जिस से मैं वचित हूँ
क्योंकि मैं मुरदा हूँ
केवल मुरदा!



## ये ठण्डे चूल्हे बर्फ़ीले

ये ठण्डे चूल्हे
बर्फीले—
पीले बरतन
क्षय से पीड़ित
घायल-पायल-से मिल-लोढे
अधजले तवे, काले कुरूप—
नंगे चिमटे
औंधे अम्बर की खाई-सी,
गहरी कड़ाहियों की खन-खन

यह पड़ोस का छनन मनन
आंगन की तुलसी से छन-छन
भजिये की लिपटी हुई गन्ध

यह अकथ घुटन
भूखी शामें
भूखा जीवन
ये इच्छाएं, ये आशाएँ
विद्रोह द्रोह की भाषाएँ
सब चट्टानें
सब चट्टानें
ये ठण्डे चूल्हे बर्फीले
पीले बरतन।

यह कलाकार का भूखा घर

उबली खिचडी
ठिठुरी दालें
यह फटे दूध-सा जर्जर मन

टूटे चमचे
उमसी सँडसी
अतिशय उदास चौके बेलन
ट्यूमर-सी
फूली डेगची
खाली-खाली राशन बरतन
नीरस खजूर की छाप लिये
ये हरी पत्तियाँ, ज्योतिहीन
चिपकी हुई डालडा से
यह कालकोठरी-सा जीवन

नगे बच्चे
भूखी बीबी
अतिशय पीडित सौन्दर्यबोध
एनेमिक पीले उदास चेहरे
यह सभी कर रहे नया व्यग्य
यह राह तग !
ये सभी व्यग्य
ये सभी व्यग्य
यह राह तग !

इन सब के अन्तर मे पीडा
अतिशय पीडा
दाम रोग-सी ग्रस्त-ग्रस्त अन्धी कोठरी
काले कोयले

चौके की काली छत में आ
काले-काले दुर्गम छाले
यह मौन में थाली, कप, गागर
लिपटन का खाली-सा पैकेट
यह मध्य वर्ग के टूटे कमरे-सा
नाप रहा अपना जीवन

हँस रहा है आँगन-सा
दरवाजे का साईनबोर्ड
उजला-उजला
अखबारों में खाली कॉलम-सा
रेड टेप और सम्भ्रान्ति संक्रमण
जीवन का
लगता जैसे
हथियार बन रहे लड़ने के
ये ठण्डे बर्फीले चूल्हे
पीले बरतन।

कवि कलाकार, अतिशय भावुक
अतिशय उदार, अतिशय गतिमय
ये सभी व्यंग्य
यह राह तंग
यह सब का सच
यह सब का सब।



# चट्टान का कुआँ

मैं
अपनी विशृंखल अस्त-व्यस्त जीर्णता की साधिकार निष्ठा-सा
खण्डित बाहों की एकलव्य साध लिये
अभिशापित आजानुबाहु-सा अपनी संचित शक्ति का खारापन
अपने अन्तर में लिये
लुंज हाथोंवाले चट्टान का
उदास खामोश अन्तराल में आग्नेय साख से द्रवित
पथ के किनारे का एकाकी कुआँ हूँ।

चार बाँह  चतुर्भुज था
रसमय रस स्निग्ध था
किन्तु इस ऊसर चट्टान की अतल छाती तल
उस अहम् का पिघला हुआ रूप पा
खारा हूँ  स्वादहीन, रस-वंचित भावहीन
विपाक्त स्थिति का अनासक्त कण हूँ।

पास कोई आता
मुझ से भी कहता
तुम मेरे अकेले पथ के रस स्निग्ध कूप हो
क्योंकि मैं उन सब के रास्ते से अलग हूँ
जो केवल मीठा रस-स्निग्ध ही स्वीकार कर
गर्वित हो जाते हैं
मेरी प्यास सामूहिक प्यास नहीं
मेरी प्यास अपनी है, अपनी मर्यादा में प्रतिष्ठित है
मैं तुम्हें उन-सा नहीं देखता जो कुएँ का पानी पियोर

कीचड़ में डूबी सारी अनुभूति चल जाती है
प्यासे नहीं होते व
उन की प्यास कभी अपनी नहीं होती।
और तब मैं यह सोचता और कह पाता—
मानता हूँ मैं निकृष्ट हूँ
लेकिन मैं इसलिए नहीं हूँ
क्योंकि सब प्यासे हैं
शायद मैं निरालम्ब निराधार नहीं हूँ
इसलिए आओ, ओ मेरी सत्ता के विकल्पण
एकाकी अन्वेषण
स्वीकार करो मेरी तिक्तता
मेरा खारापन।



# गलता लोहा

इस तप्त जलती गहन गुरुतर मौन भट्ठी मे सतत मै गल चुका हूँ।
अरुण तापस तप्तश्री के मुक्त बन्धन, अग्नि के
चिर मुक्त क्रन्दन मे अडिग
आजानु बाँहो मे कसा अभिषिक्त सीमा मे बँधा—म जल चुका हूँ।
यह निहाई—
चोट खाती, थकी, बोझिल, चिर अपरिचित-सी पडी निस्तब्ध
मुक्ति को वह कवच-सा यो ओढ कर क्या रूप देगी?
स्वय अपनी नियति की उलझी पहेली पर किसी
[illegible]

चोटें सहेगी
और वह आवाज—
वक्ष पर गिर चूर चकनाचूर होगी
लौट जायेगी सघन घन नाद के झोंका [illegible]
ये दिशाएँ काँच की, बिल्लौर की खुद [illegible]
कि जो मै
एक लोहा था गला अनुताप पाकर [illegible]
कि जो निष्प्राण थी, पर किसी [illegible]
प्रज्वलित ज्वाला निकट
निज रिक्तता के बीच साँसो को [illegible]
और उस मुरदार [illegible]
फौलाद था
पर आच थी उस सघन [illegible]
जो सँजो कर रूप विद्रूप [illegible]
निज ऊष्मा की [illegible]
दे रही है आस्था, [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
तप्त जलती [illegible]

## स्टैम्पीड

वे चरण नही थे । नतमस्तक श्रद्धा के इस्पाती भाल थे
जो तर्कहीन, अव्यवस्थित सस्काररहित होने के नाते
अनभिज्ञ, दुराचारी, चरण बन न जाने कितने चरणो के
अकुरित मस्तक कुचल गये !

वे मात्र भक्ति नही थे !
अहकार के अन्धे कूप थे जो गगा की पावन ज्योति से
अन्त करण स्निग्ध करने आये थे !
किन्तु जो मर गये वे अज्ञानता के शव नही थे
अन्धे कुएँ नही थे जो तीर्थराज की पुण्य भूमि पर
गिरे और टूट गये
वे जो मर गये चीटी नही थे रूढिग्रस्त चरण थे
जो चीटी बराबर आस्था द्वारा डँसे गये ।

व्यवस्था
मलिन-वसना द्रौपदी-सी, खुले केश, दशाक
व्यग्य-सी खडी रही दु शासन को बिन जल, वस्त्र उठाते देख
ये पहाड कपडो के, गठरियो के ठाठर, धाटियो के स्ट्रेचर
की बाहे निराधार

आडम्बर
धर्म-सघो के महामहिम मण्डलेश्वरो के आये आसन
दिव्य भाल
जैसे गुबरैलो को जमात एकत्र हो, कर रही अपनी बात



अनु

बैठे, घिनौने, कृत्रिम गोबर की छत पर पहन—
    गैरिक वसन, मण्डलाकृत आभूषण विषयाक्त
सहानुभूति
धर्म की विमाता-सी पुत्रवती होने पर वंचित है वात्सल्य से
आदमी की मौत सहज सहजतर घटना है इन के लिए—
धर्म जीवित रहे आदमी यदि मरता है मर जाने दो
किन्तु ये जानते नहीं,
अभी तो मरे है अन्धे कूप अन्ध विश्वास के
मरेगा आदमी जिस दिन, उस दिन बिखर जायेगा जीवन
जीवन का धमनान
ये चरणों के अंकुरित मस्तक टिक नहीं पायेंगे
वे चरण नहीं थे जो कुचले गये।



मै और मेरे घिरे हुए दायरे

## मै आत्मलीन हूँ

मैं आत्मलीन हूँ
रहूँगा आत्मलीन
बन नही सकता आवाज़ मैं किराये की
नही हूँ भोपू, प्रतिध्वनि किसी विज्ञापन की
इश्तहार की कोर पर छपी हुई तसवीर नही हूँ मैं
नहीं हूँ वह डुप्लीकेटर
जो छाती पर वज्र रख
अनुकृति की मशीन सा रेता जाये

आत्मा का मोती मैं लूँगा वही
जो स्वाती है, ग्राह्य है, प्रकृति है
और इन सब से ज्यादा
जो मेरा है, अपना है, निज का है।
छाती पर अपने ट्यूमर-सा टापू उगा कर करूँगा।
बिठाऊँगा मैं उस में प्रतिमा तुम्हारी नही
इसीलिए कहता हूँ
आत्मलीन हूँ
रहूँगा मैं आत्मलीन ही।

आत्मा मेरी तुम्हारी नही है
एक होने पर, सर्वोपरि होने पर
गुणधर्मा है वह
वह पकती नही बावर्चीखाने मे
पकाता है उसे अनुताप मन का
आत्मलीन क्षण का तूफानी आत्मबोध
जनक है मेरी रचना का

और यह रचना
आटे की लेई-सी पिलपिली नहीं है
जिसे तुम काठ के बोतल पर रख आकृति दो
यह है सम्भावना उस मृत्तिका पिण्ड की
जो किसी की पार्थिव आत्मा बन
अंकुरित कर जाती है
श्रद्धा के क्षण दो किरण-कण।

सच मानो ओ
कथ्य तथाकथित जनश्रुतियो के
आत्महीन नहीं हूँ मै
आत्मलीन हूँ
रहूँगा आत्मलीन ही मै।

कुत्ते की परछाई-सी
जो ध्वनिया मेरे आसपास मुझ से टकराती है
मै उन ध्वनियो से बड़ा हूँ
क्योकि मै सुन लेता हूँ
अपनी आत्मलीन स्थिति मे
करुणा, वेदना, पीडा
उन सब की जो मेरे साथ-साथ
मौन हो, मुझ-से ही मूक हो सकते है
मेरा अहकार
अपनी परिधि का स्वामी है
स्वधर्म की सीमा मे सहधर्मा है
दम्भी नही है वह
इसीलिए वह ईश्वर भी नही है
केवल मेरा है
मेरी आत्मलीन स्थिति का है।

■

## यज्ञ मै ने भी किये थे

यज्ञ मै ने भी किये थे
मानसरोवर के हसा को मै ने भी बुलवाया था
पर मैं क्या करूँ
वे मोती जिन्हे हस चुनते है
जिन्हे मैंने असली समझ सँजोया, सँवारा, रखा, वे सब
नकली निकल गये

सच मानो ओ गुरुजन
यज्ञ मै ने भी किया था।

घास की रोटी अब बिल्ली नही खाती
चूहे बहुत है
उन्ही के पीछे दौडी वह न जाने कहाँ चली जाती है
मै क्या करता ?
तपस्वी तो मै भी था
घास की रोटी तो मै ने भी बनायी थी
पर चूहो की नस्ल ने आदमी मे बिल्ली तक
महज भटकन ही पैदा की
बिल्ली ने घास की रोटी नही खायी
बच्चो को मगर खानी पडी
मै क्या करूँ तपस्वी तो मै भी था।

भील सब
राजभवन मे लोक-नृत्य के लिए चले गये
भामाशाह ने टैक्स मे बचने के लिए
दिवालिये की सनद ले ली

नही तो
ह्विस्की की एक चुस्की
महाशय दयाराम के साथ पी कर
आज मै भी पचायन अफसर होता
वैसे कर्मवीर मै भी था
घर उजाडा
अनपढ बच्चो को घास फूस-सा बढने दिया
कमरी ओढ जिया
खून का घूँट पिया
किन्तु
बिल्लिया जो ड्राइगरूमो मे पलती है
आदमी को खाती हैं
चूहो को खाती हैं
घास की विटामिनरहित रोटी
उन्हे पसन्द नही
मै क्या करूँ
भीष्म सब
राजभवन मे लोक-नृत्य के लिए चले गये
तपस्वी तो मैं भी था!

मसीहा होता मैं
पर क्या करूँ
बढई सब 'उड क्रैफ्ट टीचर' बन
हडताल मे लगे है
क्रॉस की लकडिया बेजोड पडी हैं
बसूले का युग नही रहा
युग है क्रैफ्ट का
मै क्या करू?
सेठ रमण लाल भाई के साथ
खादी की हुण्डिया मैं ने भी बिकवायी हैं
हैण्डी क्रैफ्ट पर लेक्चर दिये है

भूदान मे शामिल हो बजर जमीने दिलायी है
पद-यात्रा के साथ बुद्धि-दान भी किया है
मै क्या करूँ ?
क्रॉस बिना मसीहा कैसे बनूँ
वरना मसीहा तो मैं भी था।

पक्ष से विपक्ष तक सभी मानते है
जिस तेल के कनस्तर मे चूहे मरते हैं
उसी तेल को गन्धी बन
इन के फाहो के साथ बेच दिया जाता है
काम यह करतब का
सरकार ने मान लिया
नही तो मै भी विद्रोही था
विद्राह तो किया है मैंने
यह तो महज एक बात
सरकार यदि न मानता—
तो विद्रोही मैं भी था
मै क्या करूँ
मै चूहे को चूहा ही कह पाता हूँ
यदि मैं कहता गणपतिवाहन
तो शायद मिनिस्टर होता
ओ गुरुजन
ओ प्रियवद
ओ सदानन्द
तपस्वी तो मैं भी था
यज्ञ मैं ने भी किये थे
या याज्ञिक
दीक्षित भी था
किन्तु यज्ञ के पुरोहित
सब बन गये कसाडी।

# एक गलत आवाज की माँग

मै बोलना चाहता हूँ
क्योंकि मेरे पास भाव है, शब्द है, कल्पना है, स्वप्न है।
मै बोलूँगा
क्योंकि कालभैरव के ताण्डव-नृत्य की
अर्थ-शब्द भेदी ध्वनि
प्रलयगर्भित क्षणों म भी
सृजन की सम्भावना है
जो मुक्त है स्वच्छन्द है
और मै उन स्वरो का उत्तराधिकारी अधिष्ठाता हूँ—
जिन्हों ने स्वरावद्ध लय गीत को शब्द अर्थ दिया है
शब्द
    जो सृष्टि है क्योंकि वह भावान्तरण की प्रक्रिया है
अथ
    जो शक्ति है मस्तिष्क की अकुरित जिज्ञासा का तथ्य है
    मुक्ति है सीमाओ की
    भक्ति है आस्थाओ की।

मेरी आवाज बन्द करने के लिए
ये किताबो की फसले
ये मुरदा फसले
पीले सूखे टेटुए म घुटी हुई अक्लें
डिप्थीरिया के कीडो से भरी हुई नजरें
ये मुरदा हैं
बस मुरदा है
मेरी आवाजें इन के लिए नहीं

क्योंकि मैं जिन्दा हूँ
[ मैं जो कि तुम हो
तुम जिस में वे सब हैं
जो मुक्त हैं—स्वच्छन्द हैं
वे सब जो सविद् स्वर हैं
नयी पीढ़ी के ! ]
आत्मा की गहराइयों में
एक आवाज़ है जो गूँजती है
इस पर चाहे जितने गुदे हुए
साउण्ड प्रूफ
प्लाइ बोर्ड
कागज़ लगाओ
इस पर चाहे जितनी सगीनों की नाक चढ़ाओ
ये आवाज़ें—ये तरतीबें
ये उम्मीदें—ये तसवीरें
यह जिज्ञासा—यह भाषा
[ रस-स्निग्ध भाव-सिंचित
स्वप्नगर्भित आशा ]
इन में नयी पौध का धानियाँ आँचल है
कहीं द्वापर
क्षितिज पर
उग रहा उदयाचल है।

तुम्हारे शब्द तुम को सलामत हों
क्योंकि सत्यान्वेषी भावरहित शब्दों का बोझा नहीं खीचेगा
वह कच्ची नयी ईख की पंक्तियों से
स्वर-व्यंजन सीखेगा
कचनार के फूलों से शब्द-शब्द
मदार पुष्पों से उष्ण आतप में गन्ध-स्राव
उगे हुए अंकुर में लिपि-लेख

इन्द्रधनुष की मेहरावों पर
चढ़ कर वह बोलेगा
क्योंकि
वह मुक्त है—मुक्त उस की प्रकृति है
दृष्टि और गति है।



## मणिधर विषदशहीन

यदि उस दवा बेचने वाले ने
मेरे विष भरे दाँत तोड डाले
तो मेरा दोष क्या ?
जो तुम सब अपनी-अपनी लाठिया ले
ढेले, पत्थर, ईंटो का अम्बार ले—
मेरे पास खडे हो—
मेरे मन पर, शरीर पर
इतने असख्य घाव करने पर उतारु हो
ताकि मै पराजित हो
अपना मुँह खोल
तुम को यह दिखला सकूँ
और विश्वास भी दिला सकूँ—
—कि मै विषहीन नपुसक कीडा हूँ
रेग जाऊँगा इन्ही नालियो मे
चीटियो के लगने पर भी
तडपूगा मगर बोलूगा नही !

किन्तु मै ऐसा भी नही करूँगा
अपने प्रत्येक घाव पर
अपने ही रक्त की आहुति दूँगा
तुम्हारे इन हाथो की—
लाठियाँ और उस मे भिचे हुए पत्थरो को
अपने रक्त का टीका दे
अमर वरदान दूँगा
ताकि तुम्हारा यह श्रम बना रहे

कि हर [illegible] नाग [illegible]
( [illegible] )
[illegible] होता ही है।

[illegible] ओ जनमेजय [illegible]
क्या [illegible] तुम
उन तुम्हारे ही अनुज का
[illegible]
तुम्हारे मन पर पाप करने का प्रस्तुत हो
चिर-स्मरण रहेगा ?

मैं अपनी रक्त का [illegible]
गायक गाऊँगा
यदि तुम उस समय
मेरी स्मृति पर
एक क्षण को भी
सब कुछ सहन करने में
समर्थ होगे।

ओ जनमेजय
मैं उस समय मर कर भी
तुम्हारे आसपास
जीवित रहूँगा।



## मै और मेरी परित्यक्त स्थितिया

सन्तप्त युग की विषमता ले पडा हूँ
मै इन ऊसर मरुभमि पर एक अर्धविराम-सा
क्यो कि मै पूर्ण होता यदि
अब भी हाथ-पैर वालो ने अपनी पुरानी भाषा
प्रतीक, बिम्ब, सम्पर्क-चिह्न जीवित रखा है।
मुझ से घृणा मत करो
मैं किसी अधूरी कृति का एक जला हुआ पृष्ठ हूँ।

मै चाहता तो भगीरथ-सा ब्रह्मा के नैसर्गिक जलपात्र मे
भागीरथी पृथ्वी पर ला इस विभीषिका को शान्त करता
तुम्हारे, तुम जो भावी सन्तान हो, माथे पर
कश्मीर की घाटियो का हरिताभ अचल लुटा देता
तुम्हारी आखो म अनन्त ज्योति अजन की रेखा खीच देता
दे देता तुम्हारे चरणो का वह नूतन गति
जो पग-पग पर तीर्थो को जन्म देती
लेकिन मै वह नही हूँ
आज मै रावण का वह पराक्रमी हाथ हूँ
जिसे उस ने स्वय काट कर अग्निकुण्ड मे डाला है
शायद हविष्य की तेज पुज-माला से वह क्षयी शक्ति उपजे
जो ध्वस के ताण्डव पर सोने की लका बसा सके

इसी लिए मै कहता हूँ
संस्कारच्युत, विस्थापित क्षयी रावण से
तुम डरो नही

तुम नाम हो
मकान के निर्जीव पालने पुरातन नहीं
निष्प्राण गये
मेरी भीत है तुम पर
इस लिए ढगा नहीं
मन परिवार भरा।



# मेरा अपराध

मेरा अपराध यह है
कि मैंने कारनिस से गिरे हुए गौरैये के चूज़े को
फिर कारनिस पर रख दिया है।

बेतहाशा घटती हुई मक्खियों को
कमरे में जाली का दरवाजा लगा कर
बाहर ही ठहरा दिया है।

अनगिनत गालियों, ढेलों और पत्थरों के बीच
अपना रास्ता निकालने की कोशिश की है।

उन लैम्पपोस्टों के नीचे कभी नहीं रुका
जिन पर पागल-से करोड़ों पतंगों की भीड़
आदतन मरने के लिए तत्पर है।
उन चौराहों की भी परवाह नहीं की
जिन पर बैठ कर कुछ मोटियाकर
इन्सानियत के बारे में बात करते हैं।
उन उँगलियों और नुक्कड़ों की भी परवाह नहीं की
जहाँ हर रोशनी की किरन पहुँचते ही बुझ जाती है।

मेरा अपराध यह है—
मैंने बिना सिर उठाये
और किसी चौखटे से टकराये
अपना सिर बचा लिया है
ताकि वक्त-जरूरत काम आये।



इतिहास के दर्पण मे

# मै मर गया

एक खामोशी के साथ मैं मर गया
जितना मैं जिया वह महज जीने की इच्छा थी

खामोश बैठ कर जीने की अपेक्षा—
मै ने हर भीड भाड, शोरो-गुल का साथ दिया
लडा, जूझा, चला, दौडा
जब कोई कही घायल हो कर गिरा
जब कोई कही चलते-चलते घिरा
जब कोई रुका, ठहरा, झिझका, डरा
जब कोई झुका,
मै ने अपने घायल हाथ उधर बढाये
और बिच्छुओ से भरे थैले मेरी हथेली पर
रख दिये गये
मैं ने उन्हे स्वीकारा
क्यो कि वे ही धरोहर थे मेरे अपने निजी।

आज मै जो कुछ भी जिन्दा हूँ
वह, वह मैं नही हूँ
बल्कि इन सारे विषैले दशनो मे युक्त
एक अस्थि हूँ
जिस के नीचे सस्कार-सी स्मृतिया हैं
और ऊपर एक श्वेत रग, अकहीन
त्याज्य अवशिष्ट का आवरण।



इतिहास के दर्पण में

# शीशे का पारा घुल जाता है

शीशे का पारा घुल जाता है
आकृतियों का दोष नहीं होता।
पृष्ठभूमि की जर्जरता से
रूपों की विकृत मुद्राएँ
बड़ी भयानक लगती हैं।

पारे का भी दोष नहीं होता
कुछ शीशे ऐसे होते हैं
जिन पर पारा टिकना मुश्किल होता है
गहराई के अभाव में भी
शकलें पतली लगती हैं।

कुछ शकलें ऐसी होती हैं
जो पारे-शीशे के बावजूद बढ़ती हैं
इन का घटना बड़ा भयानक होता है
शीशे की, पारे की सत्ता यद्यपि अस्तित्वहीन
फिर भी उन की मर्यादा है।

किन्तु एक स्थिति यह भी होती है
जब कोई सस्ती शीशे पर बैठी
यही सोचने लगती है—
मेरी आकृति इतनी बड़ी हो रही
जो शीशे की सीमा को भी तोड़-फोड़ कर
बढ़ जायेगी।



# इतिहास का कीडा

इन्साइक्लोपीडिया के पन्नो म
[ दबे हुए कीडे के आकार-प्रकार ]
एक जिस्म कि जिस म दिल नही
उस दिन अचानक पिस गया
एक खून या धब्बा नेपोलियन के मस्तक पर रह गया।

हर कोई जो किताब खोलेगा
उस धब्बे स घबरायेगा
मगर
यह सत्य है कि जिस ने उस किताब को खोला
वह कोई फौजी-जनरल नही था
और जो दब कर मर गया
वह हृदयहीन कीडा था।



## इतिहास और प्रेतात्माएँ

ये प्रेत आत्माएँ, यह इन का सूक्ष्म नतन
सदियो से पीडित मानवात्मा का घोर पतन
ये कैद की जा सकती हैं
इन्हे बोतलो मे बन्द किया जा सकता है
क्यो कि ये इतनी सूक्ष्म है कि कही भी समा सकती हैं
इन मे आत्मा है किन्तु जड है वह
इसी लिए विक्षिप्तता की परिचायक भी है।

आज इस म्यूजियम मे
इस जडात्मा प्रेतात्मा को भी
बोतल मे बन्द कर दो
क्योकि स्वतन्त्र हो कर ये आत्माएँ
केवल घटनाएँ गढती हैं
पुनरावृत्ति है ध्येय इन का
सांसो के अक्षुण्ण परिवर्तन को भी
नही मानती हैं ये
इन का अस्थि-पजर समय निगल गया है
शेष है आत्मा
आत्मा को बोतल मे बन्द कर दो।

आने वाली पीढी
कभी इस बन्द बोतल को देखेगी
इन की आकृतिहीन स्थिति से सीखेगी
पितरो की अमर्यादित शक्ति के प्रति
व्यवहार की सक्रियता भी।

यह जो प्रेतात्मा है
इसे बन्द कर दो।

■

## इतिहास और चरवाहा

कहता था चरवाहा एक, भेडो का—
इतिहास कुछ नही है, मैं हूँ—ये भेडे हैं
मेरी निष्ठा है इन भेडो पर
ये भेडें कुछ नही,
मेरी ही सीमा म विकसित हो
सिर डाल चलना जानती हैं
हाँकता हूँ मै इन्हें जिधर भी चाहता हूँ।

इतिहास मेरा मन है—
उस म केवल इच्छा है मेरी अपनी
इन भेडो का अस्तित्व नही कुछ
ये केवल मेरी इच्छा को पूर्ण करने की हेतु हैं
चलती है चलना इन का स्वत्व नही
मेरे मनमाने नियमो की परिणति है।

लेकिन ये भेडें कभी-कभी
अपने से अलग हो चलती हैं
वह स्थिति भयानक होती है
और ऐसी 'काली भेडो' को
इतिहास की रक्षा के लिए
कसाई के हाथो बेच देना
सर्वथा उचित है।

कहता था चरवाहा वह
बाबा एक मरे हुए हैं
जिन्हों ने कहा है
भेडों को चराने के पहले तुम आत्म-समर्पण करो
कुलदेवता के समक्ष
बुद्धि बेच दो, तर्क मत करो
और मैं ने अपनी बुद्धि, अपना तर्क बेच दिया है
मेरी इच्छा भी बाबा की इच्छा है।

■

# इतिहास और डी० डी० टी०

आया है वह
ऐण्टी मलेरिया का बान लिये
स्वास्थ्य विभाग का नायक
घर का कोना-कोना साफ करेगा
मच्छर, कीडे, रोग-दोष को
दूर करेगा इस पिचकारी से
किन्तु
सारा घर तलाश करने के बाद
कही किसी कोने मे कोई इन्फेक्शन नही मिला
कही एक धव्वा नही था सारे घर मे
और इस प्रसन्नता म
जब 'ऐण्टी मलेरिया बान' का सचालक
भगवान् की प्रार्थना करने लगा
तो उसे दिखाई पडी वह पुस्तक
जिस पर चन्दन छिडके हुए थे
अक्षत बिखरे हुए थे
और जो इस स्थिति मे
मोल लिये
नये कीडो को जन्म दे रही
लेकिन वह नायक मज[illegible]
क्योकि पुस्तको [illegible]
डी० डी० टी०

## इतिहास और चूहे

चूहो ने
जुज़दान मे बँधे
रासो को कुतर डाला
पृष्ठो के अंकित सभी चित्र
वैचित्र्य लिये
गुल्ठियाँ बन बिखर गये

और तब—
विद्वान् ने हाथ की
पृष्ठो को जोडा
गोंद से चिपकाया
ऐसे कागज़ लगाये जो पारदर्शी हो
जोड साबित रहने पर भी
खोयी हुई पंक्तियो को पढने दें

किन्तु—
कहते है
उसी मे प्लेग के कीडे थे
गिरिटियाँ कागज़ के पृष्ठो की
उभरी शरीर पर
आत्मा पर
मन पर
और—
तडप-तडप कर मर गया
वह जो साक्षी था इतिहास का।

## इतिहास और डी० डी० टी०

आया है वह
ऐण्टी मलेरिया का वान लिये
स्वास्थ्य विभाग का नायक
घर का कोना-कोना साफ करेगा
मच्छर, कीडे, रोग-दोष को
दूर करेगा इस पिचकारी से
किन्तु
सारा घर तलाश करने के बाद
कही किसी कोने मे कोई इन्फेक्शन नही मिला
कही एक धब्बा नही था सारे घर मे
और इस प्रसन्नता म
जब 'ऐण्टी मलेरिया वान' का सवालक
भगवान् की प्राथना करने लगा
तो उसे दिखाई पडी वह पुस्तक
जिस पर चन्दन छिडके हुए थे
अक्षत बिखरे हुए थे
और जो इस स्थिति मे
खोल लिये
नये कीडो को जन्म दे रही था
लेकिन वह नायक मजबूर था
क्योकि पुस्तका पर
डी० डी० टी० छिडकना जुम है।



## इतिहास और चूहे

चूहों ने
जुजदान म वँधे
रासो को कुतर डाला
पृष्ठों के अंकित सभी चित्र
वैचित्र्य लिये
गुरिठयाँ बन बिखर गये

और तब—
विद्वान् ने हाथ की
पृष्ठों को जोडा
गोद से चिपकाया
ऐसे कागज लगाये जो पारदर्शी हो
जोड साबित रहने पर भी
खोयी हुई पंक्तियों को पढने दें

किन्तु—
कहते हैं
उसी मे प्लेग के कीडे थे
गिरिटया कागज के पृष्ठो की
उभरी शरीर पर
आत्मा पर
मन पर
और—
तडप-तडप कर मर गया
वह जो साक्षी था इतिहास का।

कभी-कभी
इन चूहों का इन्फेक्शन
बड़ा गहरा होता है
आदमी मर जाता है।

■

## इतिहास-सेतु

जब मैं ने पुस्तक खोली
मुझ से इतिहास-पुरुष ने कहा
किसे ढूढ़ते हो  मुझे ? या अपने को ?
मैं ने कहा—केवल अस्तित्व को !

उन्हों ने एक साथ अपने हाथ मे तलवार ले कहा—
अस्तित्व मेरा नही
उन मूर्खो का है जो मुझे पूजते है
मैं तो केवल जिया था, मरा था, लडा था
भोगा था सुन्दरियो के रूप को, पृथ्वी के गर्भ से निकाला था
अदृश्य गोपनीय रत्न
इसीलिए अस्तित्व मेरा नही उन का था
जो मेरी जय-जयकार के साथ
केवल तमाशा देखते रहे !

मैं ने उन की जग-लगी तलवार उठायी
उसे छू कर मैं ने कहा—'अस्तित्व इन का है'
वे एक साथ बोले  लेकिन मैं ने इन्हे चलाया कब
मैं ने तो केवल इन्हे लिया था
इसे चलाकर मरने वाले अनाम हैं
उन्हें मैं भी नही जानता !

मैं ने फिर पुस्तक खोली
देखा

एक लम्बी चीटियों की पंक्ति
अपने अण्ड लिये पुस्तक के एक सिरे से चढ कर
दूसरे सिरे पर उतर रही थी
मैं मौन मूकम्पा देखता रहा

जैसे किसी ने कहा—
इन पर चढ कर यात्राएँ की जा सकती हैं
इन्हें वरण कर जिया नहीं जा सकता ।



आदमी  एक अन्तर्दर्पण

# आदमी

मौन धरती से सटे
ये रेंगने वाले सहज पावन
सो रहे फुटपाथ पर
ये जूझने वाले तमसित ? मौन प्लावन !
जेबकतरे
भुखमरे
हर पस मे बजते हुए सिक्के
खनकते
लूटते पैसे किसी सम्भ्रान्त अर्थी के किनारे
टूटते !

[ ओ पितामह
ये तुम्हारी अर्थियो के पास
किनके शेष रजन
स्नेह अजन
स्वलन ! ]

क्या नहो मे और कुछ ?
बस मात्र भावावेश
मात्र पुनरावृत्ति के मम दोष का अवशेष
व्यमन मात्र ?
उषा के सन्दर्भ म क्या कुछ नही
केवल एक बूढे दिवस का अवसान

[ ओ पितामह
देह की कोई निरर्थक नही
वह है उष्णता

साँस की गति—तीव्रता
उत्फुल्ल रोमावली, रोमांचित उन्मेषता
ब्रह्माण्ड के नवसृजन की सँजोये हेयता ]

मैं उष्णता
मैं खौलता विद्रोह करता रक्त
टूटते हर अंग की मधु मृजन सुरभित शक्ति
रोमांच की अनुरक्ति
रंजित आग की नव दृष्टि !

[ ओ पितामह
रज,
वीर्य
मिश्रित ही नहीं मैं
मैं अभिव्यक्ति
निर्मित व्यंजना
सम्भाव्य
संचित कल्पना ]

मैं नहीं केवल कथन
मैं हूँ शब्द
आकुल शब्द
व्याकुल स्खलन
उत्तप्त मन्थन !
क्लिष्ट पौरुष
सहज अर्पण
सीपियों के सम्पुटों में स्वाति
मुक्ता दर्प
केवल घिनौनी नालियों का जल नहीं
आकाश के उत्फुल्ल सजन की घड़ी में
रिसा झंझावत

तपती धात
बढता वेग
चढते ज्वार का आभार !

[ ओ पितामह
मैं नही   अपवाद
मैं,
एक जाग्रत स्वप्न
स्नेह अर्जन
मुखर वन्दन
अभिभूत
आलिंगन
विसर्जन ]



## अस्तित्व-बोध

कभी-कभी सोचता हूँ
यह मैं ने क्या किया
मेरा घर,
एक हरा-भरा गुलदस्ता हो सकता था
एक संगीत की कड़ी बन सकता था
लेकिन इस युग में
मैं ने क्यों यह चुना
जिस में सिर्फ़ रेत है,
मरु है, विष है, व्यंग्य है ?

और तभी
मेरे आँगन की दीवार पर एक पुनर्नवा का अस्थिपंजर
झूलता सा दिखा
चौके के टीन के नीचे रिसती हुई काली धुँधली डामर
की रेखा मिली

और कमरे के ऊपर,
एक मोर के डैनों का बना पंखा हिला,
दीवार पर चढ़ती, गिरती और फिर चढ़ती
एक चींटियों की पंक्ति मिली,
अपनी और गृहिणी की बीस साल पुरानी तसवीर हिली
एक दस साल पुराना खत मिला
एक दोस्त की याद आयी
एक तसवीर एक रील-सी
अपनी मनहूस बारात के साथ
आगा के बाहर गुजर गयी

और फिर
थाल मे रखी ऐंठी रोटी
बैंगन का भुरता
सूखे ओठ लिये बच्चे
अधनगी बीवी
महावर-रजित एडियो मे हल्की बेवाइयाँ
गुलाब-से चेहरे पर कुछ काली झाइयाँ
एक टूटी रेलगाडी के पहिये
और काठ के सिपाही
प्लास्टिक की फीकी चूडिया
रबर के पक्चर बबुए
और
और
और
कमरे की दीवारो पर अकित रेखाएँ
काली, सफेद, नीली
अपने चेहरे की पीली धारिया
फटी साडी की किनारियाँ
चिपकी चिपकी-सी कलाइया।

मै कही इसी भीड मे खो गया हूँ
मै कही इसी परिवेश मे पपडिया गया हूँ
और वही इन की रोशनियो मे अन्धा हो गया हूँ
और तब—
कभी-कभी सोचता हूँ
यह मै ने क्या किया ?
मेरा घर,
एक हरा भरा गुलदस्ता हो सकता था
एक सगीत की कडी बन सकता था
लेकिन इस युग मे

मैं ने क्यों वह चुना
जिस में सिर्फ रेत है,
मरु है, विष है, व्यंग्य है।

विसर्जन के क्षणों में कभी
खिचती नसों की रिक्तता
आँखों की पुतलियों को संकीर्ण बना देती है,
यह जिज्ञासा शायद और नहीं फैल पायी
आगे नहीं बढ़ पायी,
अपनी पथरायी आखों से
अपने ही विस्तार को संकीर्ण देखना
कितना भयावह होता है,
अपनी ही आखों की पुतलियों को
एकदम सिकुड़ते पाना कितना पीड़ामय होता है
यह मैं आज अनुभव कर रहा हूँ
जब यह घर की काई लगी दीवारें
घुने चौखटे
उखड़े प्लास्टर
उजड़ी छतें और परनाले देखता हूँ
सोचता हूँ
कैसा लगता है धीरे-धीरे जिन्दा पुरातत्व का पनपना
एक नर-बलि के अस्थिपंजर-सा दफन होना
एक 'टेराकोटा पीस' सा सारा कुनबा पाना
और जिन्दा अपने जिस्म पर ममीज का रंग पुतवाना

कभी-कभी सोचता हूँ
यह मैं ने क्या किया

लेकिन यह नागिन-सी शंका
आज कहां से सरक आयी—?

कहा से वह आग सी हवा चली
जो इस सरसता को मरु में बदल कर
और इस समरसता को रेत में बदल कर
और इस मैत्री को व्यंग्य में बदल कर
और इस अमृत को विष में बदल कर
मिट गयी ?
सो गयी ?
चली गयी ?

और सारा सन्दर्भ जैसे चित्रपट सा बदल गया
और मैं उस पृष्ठभूमि के बिना
केवल एक अर्थहीन लकीर-सा
विवेकहीन तसवीर-सा
पंगु बौने-सा
और पंखहीन पक्षी-सा
अकेला लँगड़ाता भटकता रहा।
लेकिन इस को क्या कहूँ
और उन का क्या कहूँ
जो मुझे केवल एक बेडौल जिस्म
एक न समझने वाला व्यक्ति
एक अनगढ़ व्यक्तित्व
एक विरोधी अस्तित्व समझ
केवल कुछ ज़हरीले पागल कुत्तों को दौड़ा कर
अपने को सभ्य समझते रहे,
और अब मुझे उन दशनों के जख्म से लैस देख कर
केवल यह कहते हैं
'मैं ने पहले ही कहा था
यही इसकी परिणति है।'

सभ्यता की हर रोशनी में
शायद मुझ जैसे लोग खपते आये हैं

शायद उन की गति ही है खप जाना
शायद उन की नियति ही यह है
लेकिन जब मैं फिर देखता हूँ
यह चुसनी पर पलने वाली पीढ़ी
और बिना लिबास के इन्सान
और क्लाक टावर के नीचे सोते-भुखते परिवार
टूटे पहिये,
मिट्टी की मूर्तियाँ
टूटी चाय की प्यालियों और तश्तरियों-जैसे निरर्थक लोग
अल्यूमिनियम के नाश्तेदाना मे छिपी हैसियतें
बेनवाय नस्लें
और बेपरवाह फसल
एक साथ उगती, जीती, मरती पीढ़ियाँ, औलादें
लगता है,
मैं अपने को खोज रहा हूँ, पा रहा हूँ, पहचान रहा हूँ
उफ कितना अपरिचित हूँ मैं ?

और कभी-कभी सोचता हूँ
यह मैं ने क्या किया
मैं आज अपने परिचित से
इतना अपरिचित क्यों हुआ
उफ कितना अजनबी हूँ
कितना निवासित हूँ मैं
कितना पगु

पर,
यह जो मेरी पगुता है
वह नहीं है मेरी
वह है उस सत्य की
जो हर नये प्रयोग के बाद

अपना पूर्ण अस्तित्व खो कर
बन जाता है अर्द्ध विकलांग, पशु, उच्छिष्ट
यह जो मेरी विवशता है
यह नहीं है मेरी
यह है उस स्वप्नरंजित विकल्प की
जो हर उपलब्धि में व्यक्त होती है— अपूर्ण।
यह जो मेरा विलयन है
यह नहीं है मेरा
यह है उस प्रवाह का विकसित क्षण
जो असंख्य बिच्छुओं के डंकों में
एक नये अद्वितीय को बनाता है अपरिचित
जिस में गुलदस्ते चुलसते हैं
संगीत की कड़ियाँ टूटती हैं
फेनिल लहरों और ज्वारों पर तरते शव
विराम, अर्द्धविराम का तोड़ते हैं
कभी-कभी मैं सोचता हूँ
यह मैं ने क्या किया?
फिर सोचता हूँ,
जो भी किया, अच्छा किया।
ऐतिहासिकता को भोगा,
इतिहास का भोग नहीं बना।



# मर गया लम्बोदर

मर गया

लँगडा लम्बोदर
गमायण की तकिया बना सोता था
स्वप्न मे सोये हुए रावण की मूँछ उठा
पोछ दिये उस ने नभ के सितारे सभी
कुम्भकर्ण के कान से
उलीच दिया सागर

मर गया

अपाहिज इब्राहीम
कुरान की चादर आढ सोता था
स्वप्न म हूरो के गालो पर हाथ फेर
कौसर म डूबा ललकार दिया आदम को।

मर गया

पक्षाघात से डविड
बन्दर-सा छाती से बाइबिल लगा रोया था
क्रॉस की दूकान खोल
हाथीदात के क्रॉस बना
बेच दिये उस ने हजारा हाथी।

मर गया

श्रद्धारत विवेक जो सहोदर था
रोग ही सक्रामक था

श्रद्धा का कॉलरा ऐसा था
पचा नही पाया लम्बोदर राम की मर्यादा
रावण के दस मस्तको मे मे गधे का मस्तक देख
प्रभु की माया से कॉप गया ।

पचा नही पाया इब्राहीम मोहम्मद की मानवता
उस ने केवल जन्नत की हूरो के लिए
जिवह् किये ऊँट-बकरी ।

पचा नही पाया डविड ईसा की करुणा को
क्रॉस को कन्धा पर ले
बैल-सा जुता रहा
क्रॉस को प्रभु मान
आदमी ठगता रहा ।

धर्म तो जिन्दा रहा
बुद्धि मगर मर गयी
लम्बोदर का हैजा हुआ श्रद्धा की मिठाई खा
इब्राहीम अपाहिज हुआ श्रद्धा की अफीम खा
डैविड को हैजा हुआ श्रद्धा की पनीर खा
अस्पताल म
तीन रोगी
तीन नागी
तीन योगी
साथ मरे ।
श्रद्धा के कोडे मगर कम नही हुए
मरा एक उल्लू
मरा एक कल्लू
और
कल मरेगा कोई घरेलू

दास
अनुदास
उपदास
हाफिज, कैलास ।

◻

## अनाम की मृत्यु

आदमी मर गया
कहते हैं वह आदमी नहीं था
कोई कवि था
भला-सा नाम था
सोचा था भूलूंगा नहीं
पर भूल गया नाम

सर
कोई भी हो
आदमी सब बराबर है
चाहे हो मोदी राम
श्रीराम, सीताराम
कवि अनाम ।

मरते हैं सभी
किन्तु अनाम ज़िन्दा ही मर गया
मर गया सहज स्नेह-भाव में
दर्द ही दर्द था
दर्द था तमाम
हृदय के दर्द पर
लगाता था पेन बाम
ज़िन्दा ही मर गया
कवि अनाम ।

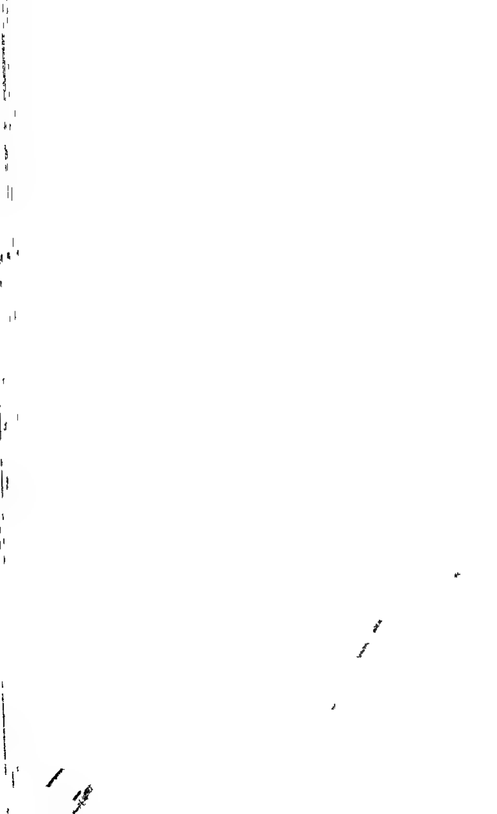
ऑफिस का काम
उस रोज़
वॉस की टेवल पर
फाइल की जगह रख आया
कॉपी कविता की
और
वही पेन वाम
कविता को
लापरवाही का नोट समझ
साहव ने दस्तखत नहीं किये
चपरासी दौड़ाये
किन्तु कवि अनाम गायव थे
पाये गये मरे हुए घर में जिन्दा
माचिस नहीं थी
लकड़ी नहीं थी
इसलिए वजट शीट
ए० जी० ऑफिस की
चूल्हे में लगी थी
दूध उबाला
भावी पीढ़ी ने दूध पिया
श्री अनाम ने कॉफी
पत्नी ने जोशादा
मा ने तुलसी की चाऽ
वावा ने काली मिर्च
कविता से उपयोगी है वजट शीट
रकमों के कॉलम, नाम
शान्त थे कवि अनाम !

चपरासी ने पूछा उपाय
वॉस ने लिखा आँय, वाय, साय
वोले तव अनाम राय

ठीक है
पेन वाम दे दो
वापस करा
कागज फिर बनेगा
बजट फिर घटेगा
मैं तो हूँ जिन्दा
फिर क्या चिन्ता ?
आज नही
अब से मैं वल मग करूँगा
किस्सा तमाम
कवि श्री अनाम।



# एक दफन हुए हाथ का वक्तव्य

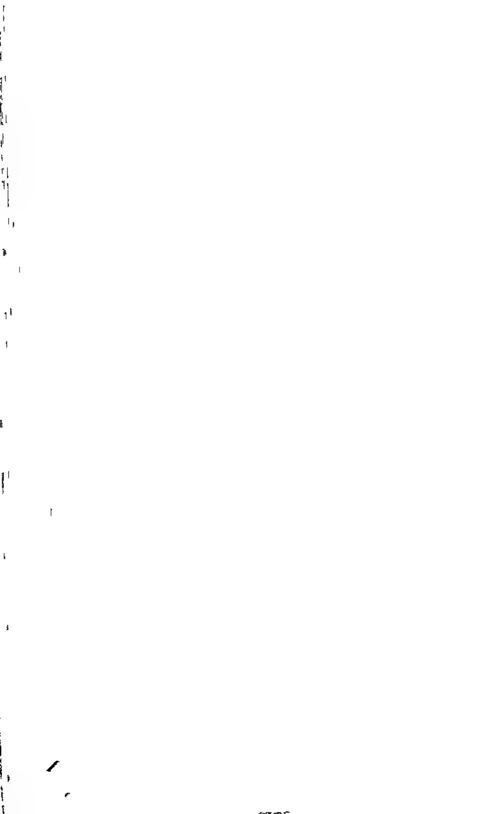


## मुझ से डरो नही

मैं अपने युग के सक्रान्त विचारो मे
सघपशील, चेतन देह का
टूटा हुआ निष्प्राण, दवा हुआ हाथ हूँ
मुझे देख डरो नही
मेरे समीप आओ
मैं तुम्हे आशीष दूँ !

तुम
जो नतमस्तक, घायल, पराजित, परम्पराहीन सन्तान हो
अपनी ही पूर्व छाया से डसी गयी गति हो
मुरदो से पटी हुई इस फर्श पर
रक्तरजित लथपथ कीचड के वक्ष पर
अपनी इस तीन पहियो वाली गाडी से
आहिस्ता-आहिस्ता पास मेरे आओ
सच मानो
मुझ से डरो नही
मै भी तुम जैसा इन्सान था
आज मैं प्रेत हूँ
क्या कि मैं अपनी मौत से नही मरा हूँ
मैं ने की है आत्महत्या जान-बूझ कर !

मुझ से डरो नही
अपने हाथो के बेलचे से
इस पृथ्वी पर पडे हुए सडे गले अगो को



# मुझ से डरो नहीं

मैं अपने युग के सक्रान्त विचारो मे
सघर्षशील, चेतन देह का
टूटा हुआ निष्प्राण, दबा हुआ हाथ हूँ
मुझे देख डरो नहीं
मेरे समीप आओ
मैं तुम्हे आशीष दूँ।

तुम
जो नतमस्तक, घायल, पराजित, परम्पराहीन सन्तान हो
अपनी ही पूर्व छाया से डसी गयी गति हो
मुरदो से पटी हुई इस फर्श पर
रक्तरजित लथपथ कीचड के वक्ष पर
अपनी इस तीन पहियो वाली गाडी से
आहिस्ता-आहिस्ता पास मेरे आओ
सच मानो
मुझ से डरो नही
मैं भी तुम जैसा इन्सान था
आज मैं प्रेत हूँ
क्यो कि मैं अपनी मौत से नही मरा हूँ
मैं ने की है आत्महत्या जान-बूझ कर।

मुझ से डरो नही
अपने हाथो के बेलचे से
इस पृथ्वी पर पडे हुए सडे-गले अगो को

गगा मे फेंक दो
मैं मुक्ति पा जाऊँगा निश्चय ही
मेरा हटना इसलिए भी जरूरी है
क्योंकि मैं अपनी खाद पृथ्वी को दे चुका हूँ
आओ
इस पृथ्वी पर अपनी बालू की दीवारो वाला भाड बनाओ
उँगलिया के निशान से
इमली के पेडो को आँवला बनाओ
इन धूलो को अपने घुटनो से रौंद कर
तीन पहिये की गाडी पकड
चलो आगे बढो
मुझ से डरो नही
मेरे समीप आओ, मैं तुम्हे आशीष दूँगा।

मेरी इस आवाज़ पर सन्देह मत करो
क्योंकि सन्देह और सशय निधि थी मेरी पीढी की
आज उस का अस्थि विसजन कर
तुम सर्वथा नये घरौंदे बनाओ
और इन घरौंदो मे वह हँसी गूँज जाने दो
जो आज तक मेरे वज्र इस्पाती हाथो मे
बन्द थी कैद थी।

विश्वास करो—
इन हाथो की रचना शक्ति पर विश्वास करो
यदि यह केवल भटक कर
ध्वस्त खँडहरो मे भटक गयी
तो यह मत समझो
इन मे रचना शक्ति नही थी
विश्वास करो

मैं अपनी सारी रचनात्मक सम्भावनाएँ
तुम्हें देना चाहता हूँ
लो इन्हें ले लो
मुझ से डरो नहीं
मेरे समीप आओ
मैं तुम्हें इस धरती की कुँआरी माटी से
तिलक दूँगा
क्योंकि तुम सम्भावना हो मेरी भी ।

तुम जो धूल-भरी हँसी हँसते हो
जो जीते हो अपने फूल भरे सपनों पर
विश्वास करो विश्वास करो
मेरा विष मुझ से दूर करो
ओ नयी भावना संस्कृति की
विश्वास करो ।

यह दलदल कभी ओज भरी सरिता का था मध्य धार
ठहराव अनवरत दे-दे कर सबों ने कर दिया इसे क्षार
तुम बढ़ो और इस दलदल को जीवन दे दो
दो बिखेर इस में अंकुर
यह सदा द्रवित हो फसल जने
सरसों के पीले फूलों की
तुम शक्ति धरो
विश्वास करो ।

यह अनामिका ग्रन्थि आज है शेष पड़े इन हाथों में
इस में निश्चय ही शेष अभी अमियमयी अनुतापों की
बन्ध्या स्मृति को मुक्त करो

तुम कुम्भज हो
अगुष्ठ छोर पर सागर धर
तुम पी जाओ सारा कल्मष
तुम ज्योति वरो
विश्राम करो !



## जली मुट्ठियाँ

मेरे नग्न हाथो की जली हुई मुट्ठियाँ
झुलसी हुई लुकठिया नही है
कोटि-कोटि धमनियो मे सचरित लोहू की उष्णता है
जिन्हे तुम ने दबा दिया था केवल स्वार्थ के दम्भ मे।

आज ये झुलमी हुई नग्न मुट्ठियाँ
शरीर स्तम्भ पर कफन से लिपटी हुई
मशाल-सी मौन है
विद्रोह है उस दबी भावना को
जिसे तुम ने जीवन की अहम्मन्यता मे दबाया था।

इतिहास है यह
धम के नाम पर व्यापक प्रश्नचिह्न
राजसत्ता के नाम पर काले दाग
आदमी की आत्मा की ज्योतित मशाल
हारना किसी एक क्षण मे सम्भव है
किन्तु
सम्भव नही है उस एक क्षण की अनास्था
जीवन भर वहन कर वैसा ही निभाना
कभी ये जली हुई हाथ की भग्न मुट्ठियाँ
प्रश्नचिह्न बन प्रस्तुत होगी ही
धम पर, नीति पर, आत्मा पर।

तुम्हारे नग्न हाथो की जली हुई मुट्ठियाँ
झुलसी हुई लकड़ियाँ नही हैं
कोटि धमनियो मे सचित लोहू की उष्णता है
जिन्हें तुम ने दबा दिया था केवल स्वार्थ मे, दम्भ में।



# इतिहास का धब्बा

एक नाजायज औलाद की सहन शक्ति
और एक देवात्मा के लाछित व्यक्तित्व के बीच
बहुत बड़ा धब्बा है काल का, देश का, और इसलिए
वह सब का सब बन जाता है धब्बा इतिहास का।

यह जो राजमार्ग के किनारे किसी अनाम ने जगह-जगह
आदमकद ऊँचाई के चबूतरे बनवा दिये हैं
जिन पर बोझ ढोने वाले, लाश ढोने वाले
आते-जाते खिलौने बेचने वाले कुम्हार,
मास बेचने वाले कस्साब,
स्कूल की बसो का इन्तजार करने वाले खामोश बच्चे,
रात के अँधेरे मे जिस्म का व्यापार करने वाली औरतें,
स्वर्ग मे विश्वास करने वाले प्रेमी-प्रेमिकाएँ,
गोलियाँ खेलने वाली लावारिस सन्तानें
जुआ खेलने वाले गुण्डे जुआरी—
सभी बारी-बारी से आते हैं कुछ देर सुस्ताते हैं,
अपना-अपना बोझ उतार चले जाते है।

यह सब का सब
उस एक करुणा मे द्रवित क्षण का उपाघात था
जिस मे ये सारे के सारे लोग
बारी-बारी से
अपनी भूख, अपनी प्यास,
अपना बोझ अपना चेहरा उदास खामोश टाँग देते हैं
और सुस्ताने के उपक्रम मे बार-बार बार-बार

हर कोई अपने को विना किसी से जोडे
एक अज्ञात परम्परा का उत्तराधिकारी पाता है
यह इतिहास का अदृश्य व्यक्ति है
जो हमेशा खपता है—जीता नही
वह इतिहास का एक बच्चा है
क्योंकि वह केवल इतिहास का माध्यम है
उस का उपभोक्ता नहीं।

आज सुबह-सुबह जाने क्यो उस चबूतरे के नीचे
तीन लाशें मिली,
एक भीख माँगने वाली बुढिया की थी
और दूसरी एक कुत्ते की,
लेकिन इसी रात बारिश में
चौडे राजमार्ग को लाघने की कोशिश
में एक बहुत बडे मेढक की भो लाश थी
जो बीचोबीच सडक पर छितरायी हुई चित पडी थी।
हा तेज़ जाने वाली गाडी
एक आवेग और आवेग मे
कुचल देती है उस अनजान को
जो केवल अकेले साहसी-सा सेतु बन जाता है।
इन इतिहास और इतिहासहीनो के बीच
जो विद्रोह मे बढता है लेकिन केवल देह-सस्कार दे
समाप्त हो जाता है।

इतिहास फिर भी चबूतरे पर अपना काल क्रम चालू रखता है
मिट्टी के खिलौने, घास के गट्ठर,
मुरदा लाशें, अस्थिहीन पजर
देश-व्यापार की भूमिकाएँ
स्वर्ग की परिभाषाएँ,
गोलियो के ज़खीरे

युद्ध की पताकाएँ,
सब की सब इस चबूतरे पर आकर ठहरती हैं, रुकती हैं, जीती हैं
सब का सब पड़ाव देती हैं, बिकती हैं
लेकिन इस युग इन सब के बीच,
एक साधारण औलाद की गहन-गाढ़ी स्याह
एक धब्बा-सा बन कर
राजमार्ग के बीचोंबीच जिन्दा रहता है।
कितनी ही घोड़े की नाल,
कितनी ही गाड़ियों के पहिये,
कितनी ही पैराम्बुलेटर की दुकान,
कितने ही गुब्बारे चढ़ाके
पिस जाते हैं और कितनी ही पीढ़ियाँ
उगती जाती हैं
लेकिन यह धब्बा बना ही रहता है।

उस दिन मैं ने जब पूछा तो समय ने कहा
इतिहास एक रक्तस्नात पुरोगाथा का है, थेरी-गाथा नहीं,
धब्बा इतिहास को नहीं चाहिए,
चाहिए गर्म लोहू की धार, कुछ गिरती के कपाल
कुछ जानकी शक्लें, कुछ मेहराबदार ताज
कुछ पोरस, कुछ सिकन्दर
कुछ-कुछ हेमू बक्काल।

■

# कटे हुए अँगूठे

निश्चय ही परम्परा मे एक और कडी
इन्द्रधनुषी अभावो के बीच
एक ग्रह, उपग्रह, एक गति की रेख उखडी
अघ्य का स्रोत नही प्रश्नचिह्न की ज्वालाओ की परम्परा उभरी
चिन्तित मस्तक पर पसीने की बूदो को पोछने वाली हथेली नही
अँगूठा है यह
हर परम्परावादी शासक इसे झुकाता ही रहा
'क्रॉस' पर, रणक्षेत्र मे, ताजमहल के निर्माण के बाद
खुले आम सडको पर जेलो मे
शिल्पी हो चाहे जो विचारो का, रचना का, कल्पना का, जीवन का
अँगूठे के सकेतो मे उगे प्रश्नचिह्नो ने
स्वीकारा है सदा, सर्वदा नये स्वप्न, नये कलेवर की जाज्वल्यमान
दीपशिखा

सोचता हूँ
कैसे झुका यह अँगूठा लौहनिष्ठ
क्यो नही टूट गया
ज्वलन्त प्रश्नचिह्न-सा

यह सजीव, चेतनपिण्ड का अश भाग
एकलव्य तो नही था
जिसे झुकना ही था किसी द्रोण के स्वार्थ हेतु
वशिष्ठ के ब्राह्मणत्व से उकसा हुआ
राम का आजानुबाहु भी तो नही था तुम्हारा हाथ
इसे तो तुम ने भी अमृतयुक्त पिया होगा
अपनी शिशुवत् जिज्ञासा म

दिया होगा हृदय-सकल्प की उष्णता
आत्मा की तपी अग्नि
मन का ज्वार-सार
शकर की ताण्डव-मुद्रा मे
इस ने भी किये होगे सृजन ज्ञान
सोचता हूँ
कैसे झुका यह अँगूठा लौहनिष्ठ
क्यो नही टूट गया
ज्वलन्त प्रश्नचिह्न-सा !

अगस्त्य का अँगूठा था
मर्यादाविहीन सागर को पिया था इसी ने
इसी ने पिपीलका के क्षोभ को जिया था
किसी चक्रवर्ती के भाल को अकित करने वाला
तो नही था
नही था यह अग किसी इन्द्र का
जो बिक जाय यो ही किसी सरल स्फुरण पर
तुम ने तो कण की उपेक्षा झेली थी
दुराचारी कृष्ण के विद्रोह का खण्डन भी किया था
शम्बूक का पक्ष ले तिल तिल जिया था
दलदल मे फँसे युद्ध-क्षेत्र के रथ को निकालने मे
रत तुम्हारे हाथ
स्वार्थी अर्जुनो ने काट दिया ?
सोचता हूँ
इतिहास के पत्र पर अकित वह धब्बा
युग का प्रश्नचिह्न बन जो गया !



## बँधी मुट्ठियाँ

मुट्ठियां बँधती हैं
इसलिए नही कि
तुम्हारे विरोधी के मस्तक पर टूट जायें
इसलिए नही कि सचित आक्रोश को
सस्कार दिये बिना छोड जायें
व्यग्य, अपवाद, हिंसा, प्रतिहिंसा
[ प्राप्य को पाना ध्येय है
और सकल्प के सूक्ष्म अस्तित्व को साकार पिण्ड देना है ]
इसलिए बँधती हैं मुट्ठियां, बार-बार बँधती हैं
मुट्ठियां बँधती है।

इसलिए नही कि
तुम्हारा आवेश यो ही बिखर जाय
इसलिए नही कि जो कुछ ग्रहण किया
बालू के कण-सा उसे फिसल जाना है
[ अहकार मर्यादा के बिना जो बिखरता है
पतन के गर्त का ही अधिकारी नही होता
वह बूँद जो स्वर्ग से गिरी पृथ्वी की गगा बनी ]
इसीलिए रचना के सन्दर्भ मे
जो कुछ मुट्ठियो के बीच से रिसा
वह भी आकार है
दूर विलोम स्थिति का प्रतिकार है
इसलिए मुट्ठिया बँधी हैं
रचना के पिण्ड से मुक्त भी बँधती है
मुट्ठिया बँधती हैं।

इसलिए नहीं कि
पिण्ड रूप जिसे दिया वह
या जो ढला रहा वह
प्रतीक सकल्प का मानवीय विग्रह है
मृत्तिका जो मूर्ति में ढल जाती है
वह भी साकार ईश्वर है
[ जीवन स्वयं संचलित, अविच्छिन्न है ]
इसीलिए मुट्ठियां बँधती हैं
मुट्ठियां बँधती हैं।

मुट्ठियां बँधती हैं
जन्म के साथ केवल अपने रक्तचाप को नियन्त्रित रखने के लिए नहीं
वरन् उस दर्द की पहचान के लिए
जिसे प्रत्येक रचना का क्षण
अपनी सृजन-संवेदना में दे जाता है
एक अग्निबोध, एक उल्कापात, एक जलती शिखा
जिसे पृथ्वी को छूते ही आदमी अपने अस्तित्व के साथ रखता है
जिसे उस की आत्मा ग्रहण करती है
एक चीख के उपरान्त, श्लथ, क्लान्त
इस लिए मुट्ठियों में केवल अपवाद नहीं होता
हर बिखरते शीराज़े को हम्सानी देने के लिए
एक जिजीविषा होती है
ज़िन्दगी, मौत, ठहराव, बिखराव, पतन, पलायन, जमाव
सब के बीच जीवित रहने के लिए
एक प्रश्नचिह्न-सी मुट्ठियां
निष्कृति हैं, मुक्ति हैं
बँधी मुट्ठियां युक्ति नहीं सम्भावित भुक्ति हैं!

काल का छद्म नाम कोई भी हो
मुट्ठियां तलाश हैं अस्तित्व की

अपने गहनतम अन्धकार में जीवित प्रतीक-सी
वह प्रकाश-स्तम्भ के समान मौन राजपथ पर खड़ी
उस आलोक दृष्टि की अमिट जिज्ञासा है
जो हर रास्ते पर केवल एक वाणी मुद्रा की अतीवता में
केवल फाँसी के उपकरण-सी
मौन मृत्यु को स्वर देती है
उन हथेलियों को खोल कर मैं ने देखा है
आज भी उन के बीचोंबीच एक ठुँकी हुई कील का दाग है
जो हर सदी में अपने जख्मी हाथ लिये मरता है
लेकिन जन्म से ही छिपाता है वह दाग
और हमारी आँखें उसे ढूँढती हैं
जो हमारी हथेलियों में आज भी जख्म-सा मौजूद है

इसीलिए वे मुट्ठियाँ केवल मुट्ठियाँ नहीं हैं
वह किसी भी हविष्य के पहले
एक आवाहन की भूमिका बन
बार-बार घायल हो
प्रत्येक विलोम को धक्का दे खुल जाती हैं
इसीलिए, मुट्ठियाँ, बँधी मुट्ठियाँ
बार-बार उगती हैं
जन्म ले मरती हैं।



अपने आत्मज से

## यह महानगर है

यह महानगर है
'ममय को दफन कर उस के ऊपर यहाँ वा 'क्लॉक टावर' खडा है।'
आस्था को कूडे मे फेंक भव्य मन्दिरा म शिला मूर्तियाँ हैं
दृष्टि को दरजी की दूकान मे बेच यहाँ हर आदमी चारुशील है
सौन्दय की विभूति का लेप किये हर कोई विभूति भूषण है
एक मैं ही यहाँ असम्यक्
क्योंकि मैं समय को 'क्लॉक टावर' मे न देख
स्कूल-कॉलेज की बसा म
थके लौटते शिशुओ की मन्थर चाल म देखता हूँ
क्योंकि मैं पिता हूँ

आस्था को चुपचाप मिल की विश्रान्त घडियो म
एक रोटी और दो भूखा म पाता हूँ   क्योंकि मैं बन्धु हूँ
दृष्टि मेरी अपनी है जिसे मैं अनुभूति देता हूँ
और
जिसे मैं पाता हूँ अनवरत श्रमशील जिज्ञासा मे   क्योंकि मैं शकित हूँ
सौन्दय की विभूति मुझे मिलती है उनमे
जो दरिद्रता मे पलने पर भी
रूपहीन होने पर भी
किसी हार हुए के घायल कन्धो पर हाथ रख
थपकिया देते हैं   क्योंकि मैं सहचर हूँ

और यह महानगर है
जहा हैं सभी सभ्य

असभ्य केवल मैं हूँ
केवल मैं।
क्योंकि मैं पिता हूँ
बन्धु हूँ
शक्ति हूँ
सहचर हूँ
असभ्य केवल मैं हूँ।

## दशरथ की अस्थि

कमरा न० २५
ग्रैण्ड होटल
बाइस्कोप की छत पर
किराये पर टिका हुआ मैं
और
पास्टर रामराज्य का
ग्रहण का, त्याज्य का ।
[ ओ मेरे आत्मज
मैं तुम्हारा पिता हूँ कामातुर मज्जा का प्रतिरूप
मेरी आसक्तिबद्ध निष्ठा जिसे तुम्हारी विमाता ने
उपजाया है
लो वनवासी
अर्पित है ]

आदमी
एक घूसखोर, हथकड़िया म बन्दी
न्यायालय में टँगा है
ट्रेन के फुटजोड से टकरा कर
एक ही मुद्रा मे वर्षों से खडा है सावधान
न मरता है, न जीता है ।
[ ओ मेरे आत्मज
मैं तुम्हारी विज्ञप्ति नही
अपनी विवशता हूँ
लो मेरी यह स्थिति अंगीकार करो
चादी-सी देह पर यह उगी हुई काई
मेरी आस्था है
लो दर्पित है । ]

आदमी
आई ए एफ के वैज मे
वायरलेस सुनता
हवाई यन्त्र का चालक है
सूतो की बनी हुई प्रतिमा है ।

[ ओ मेरे आत्मज
जीवन की यात्रा मे मैंने केवल सुना है
दया, लोभ, स्वार्थ ये सब चमचे मे
मेरे खाली मन के प्याले से टकराते हैं
सच मानो
मैं इन्ही की ध्वनि हूँ विस्फोट से परिचित हूँ
मेरी ये खोखली ध्वनिया
तुम्हारी निधियाँ नही
मेरी हैं
मुझे उन्हे अपने साथ ले मरने दो
ये वे प्रेत हैं जिनसे मै जूझा हूँ
लो
यह टूटे घरौदो की परम्परा खिलौनो म सोयी है
इन्ही ध्वनियो मे आहत हो टूट गयी
मेरे बाद उन्हे जगाना स्वीकार करो
ये तुम्हे अर्पित है ]

आदमी
टूटी पैडिल की लँगडी टाँग से चलता
देशी साइकिल की गति नापता
प्रौढता को दिखाता हरक्यूलीस की भाप है ।

[ ओ मेरे आत्मज
शक्ति से विच्छिन्न जो भी है
उसे मैं ने पाया है
मेरे इस लँगडेपन की थाती को
हरक्यूलीस के व्यग्य से अलग करो

मैं नही अपवाद
मेरे सहज अस्तित्व की गति
टूटती, घिरती और मिटती
सार्थक है ]

आदमी
ऑफिस से लौटते समय का हारा थका बाबू
धुएँ से घिरे हुए मकान मे
भूखे परिवार की परम्परा लिये जीवित है ।

[ ओ मेरे आत्मज
उस परिवार मे रामायण के पन्नो पर
पडे हुए अक्षत मे दादी के आसू हैं
उन आसुओ के धब्बो में कही वह आत्मा है
ओ अमर पुत्र
रामायण बिके बेच देना
आंसुओ के धब्बो को सुरक्षित रख
उसे सग्रहणीय मानना
आंसू जो करुणा की अग्रजा है
कौसल्या से कैकेयी तक
समान रूपा है
ओ आत्मज लो
दशरथ की अस्थि विसर्जित है। ]



## पिता रस

मैं ने तुम्हे दे दिये
अपने सारे सचित स्नेह ताल के कुइयो-से खिले अधखिले दुग्ध
धवल जुन्हाई-से
दे दिये अर्जित वन्दना के क्षण शकालु द्विधा से भरे हुए स्नेहसिक्त
शिलाखण्ड सान्ध्य नभ मे एकाकी नखत से।
व्यजित भावना के व्रण द्रवित आँसुओ के बीच की रेखा मृदुल
श्रीखण्ड क्वार के बादल अधकटे छटे-से,
मैं ने तुम्हे दे दिये इस लिए कि तुम वरद पुत्र हो मुझ-जैसे टूटे अस्त
व्यस्त पिता के

मैं ने तुम्हे दे दिये
वे कटु अनुभव सम्मान मे भी मिली जहाँ अपमान की चुटकिया
जैसे तेज छुरी पर धार चढाती ओढती चिनगारिया
वे निराश स्मृतिया जब मै ने, तुम्हारी माँ ने केवल एक घूट
पानी पी बिता दी है जाने कितनी भूख की गिनतिया
जैसे उडती हुई फबतियाँ
वे सपने जिन्हे मै ने आज तक पाले हैं और जीवन भर पालूगा
वही जाज्वल्यमान बिजलिया
जैसे चूल्हे की रोटियाँ
वे गीत गाथाएँ जिन्हें पूरा लिखा है पर पूरा जी नही सका हूँ
क्योकि जीने की फुरसत कहाँ देती है दुनिया
मैं ने तुम्हे दे दिये ये सब
मैं ने तुम्हे दे दिये एक एक
जितने भी क्षण थे महत्त्वपूण।

मैं ने तुम से ले लिये
तुम्हारे दूध के दाँतो के बीच की हँसी  कि जिस म अभावो के होते
हुए भी हम जी सके
पतग की डगमगाती डोर-से
तुम्हारी कपोलो की लाली  कि जिस मे ऊषा भी तृप्त हो पल सके
तुम्हारी शरारत  कि जिस मे तुम मात्र सन्तुलन मे बार-बार
आदमो को छोड गये
तुम्हारा खेल  कि जिस मे भूगोल की अक्षाश रेखाएँ पारे की
लकीर-सी मौत भरी
तुम्हारी फरियाद  क्यो कि जहाँगीर के बाद से फरियादो प्रतिद्वन्द्वी
गिना जाने लगा

मैं ने तुम से ले लिये
ये सारे के सारे भ्रम
ताकि तुम जियो
कपास के फूल बन कर जियो

मै ने तुम्हे दे दिये
अपने सारे सचित स्नेह
और अब मै हूँ
चौराहे पर खडी हुई केवल एक काया
मानव-प्रतिभाओ की केवल एक अनुकृति
जो तुम्हे रोड प्लेट-सी दिखेगी गतिहीन
क्यो कि मै हूँ तुम मे
तुम्हारे हर लमहे की कसक मे।



## हँसो पुत्र !

हँसो पुत्र
हँसो जो खोल कर
अधर क्षितिज बीच जो
ज्योतिमाला सलज है—बिखेर दो
धरती की घुटन फटन-सडन मे
भर दो किलकारिया—
मुक्त हास !

हँसो पुत्र
पवित्र ज्योति
और हँसो—
हँसो तुम इसलिए कि
आशा हो पिता के—
पीढी जो पिता की कायर-सी दबी रही
आज तुम सजग हो
हँसो उस पीढी पर
पाप से भरा सस्कार
घुल उठे
खिल उठे गाँठ-गाँठ
गाठ-गाँठ खिल उठे
ज्योति की धारा से
जख्म सभी हँस उठें
उठो पुत्र
हँसो, हँसो जी खोल कर !

आगे जो ज्योति-पथ
पड़ा है, तुम्हारा है।
धूल में लदा-सना
घुटनों से रौंद-राँद
केसर की कल्पना में
मुश्क निखेर दो
कपूर' 'गन्ध
धूप की पावन सुरभि
क्षण-क्षण में बिखेर दो
हँसो पुत्र
दाँतों के मोती का पानी लुटा दो
हँसो पुत्र
हँसो जी खोल कर!



## हँसो पुत्र !

हँसो पुत्र
हँसो जी खोल कर
अधर क्षितिज बीच जो
ज्योतिमाला सलज है—बिखेर दो
धरती की घुटन फटन-सडन में
भर दो किलकारियाँ—
मुक्त हास !

हँसो पुत्र
पवित्र ज्योति
और हँसो—
हँसो तुम इसलिए कि
आशा हो पिता के—
पीढी जो पिता की कायर-सी दबी रही
आज तुम सजग हो
हँसो उस पीढी पर
पाप से भरा सस्कार
धुल उठे
खिल उठे गाठ-गाठ
गाठ-गाँठ खिल उठे
ज्योति की धारा से
ज़ख्म सभी हँस उठें
उठो पुत्र
हँसो, हँसो जी खोल कर !

आगे जो ज्योति-पथ
पडा है, तुम्हारा है।
धूल मे लदा-सना
घुटनो से रौद-रौद
केसर की कल्पना मे
मुस्क बिखेर दो
कपूर गन्ध
धूप की पावन सुरभि
कण-कण मे बिखेर दो
हँसो पुत्र
दातो के मोती का पानी लुटा दो
हँसो पुत्र
हँसो जी खोल कर।



# राख का स्तूप

## यह राख का स्तूप

यह राख का स्तूप
था कभी मलय-वासित गन्ध गौरव
आत्म-सौरभ, काष्ठ-वैभव
किन्तु जल कर, सुलग कर
यह आत्म-क्रन्दित अस्थि का स्तूप
बन गया है मात्र स्मारक विगत का
अधिवास है यह रूप
यह राख का स्तूप !

यह सुलगना
आत्मान्वेषण एक तपस्या है
यह घुटन :
एक जिज्ञासा कि जिस की आँच में
इस अतल तल की निधियां पक रही हैं
इस लिए कि स्वयं पा ले मूल्यगत आख्यान
द्रवित परिप्रेक्षण–निकष-अनुभूति !
यह चुका जीवन नहीं
यह आत्म-व्यापक सघनता का है नया अस्तित्व
आस्था-अनुरूप
यह राख का स्तूप !

इस घूण जजर पिण्ड सीमा-वृत्त में यदि
हरे चँकवड, भटकटइए, दुधिया मदार के शुभ पुष्प
और इन के बीच में दो चार पौधे हरे नूतन भी सजग उग जायँ
अगर हलकी और फुलकी तितलियां

दो चार महगा कभी आ कर स्वयं ही मँडरायें
ये अपरिमित शूल यदि सौन्दर्य प्रतिमा में सहज चुभ जायें
दोष इस स्तूप का क्या
उस नयी अभिव्यक्ति का है जो बंधा है
चिर-अपरिचित सस्ताग की अपरिमित पगुता से
हो चुका विद्रूप
यह राख का स्तूप।

यह विद्रूपता
रेत पर पद चिह्न-सी अंकित विवशता का महत्व बहराव
रिक्त मण्डप या की गम्भीरता का रिक्त आसन भाव
गन्ध-गौरव-दृष्ट प्रतिमा का सहज उलझाव
आत्मा ही सहज गाथा है
स्वय जो इस राख मे निज स्नेह का कण दान देगी
राख के कण रिक्त सिकता नही होंगे
रूपान्तरण इन का स्वाभाविक है
सत्य है परमाणुओ का ज्योतिमय रजताभ
यह आत्म-मन्थन धात्री है
जन्म देगी जाह्नवी सरि-धार
नही है यह गन्ध का अवशिष्ट अन्धा कूप
यह राख का स्तूप।

नही है यह
सगर-पुत्रो की कलकित अस्थि
आत्म-आरोपित हवनिका मे स्वय आहुति बनी
यह भगीरथ की नही है प्यास
विष्णु-पग की धूलि है यह,
जो निकल ब्रह्म-कमण्डलु मे बनेगी पूज्य
यह राख केवल कल्पना का नही वंचित स्वप्न
प्रस्तावना है
सम्भावना ही मात्र इस का नही है व्यवधान।
किसी वामन विष्णु की यह याचना है

तीन डग की वृहद् सत्ता, व्यजना है
व्यजना-अनुरूप
यह राख का स्तूप !

इस राख के स्तूप को दो स्नेह
सलिल पा कर विष्णु-पग की धूल
पावन हो सकेगी
बन सकेगी जाह्नवी गगा गोमुखी !
यह स्तूप ढह कर चूर होगा
स्नेह-सचित भावना की रश्मि-रेखा मे गलेगा
ज्योति का विस्तार गति के साथ
संचित दृष्टि का कल्मष होगा
इसे पावन स्नेह दे दो—
दग्ध उर का ताप—
इस राख का रूप
यह राख का स्तूप

कौन जाने कहाँ पर आत्म मन्थन
अमिय पावन सिन्धु से ले खीच
यह स्नेह-वचित राख का स्तूप है
केवल तुम्हारा प्रश्न ?
जन का प्रश्न
अभिव्यक्ति को पावन करो हे
मुक्ति के अभिदूत
मलय-वासित था कभी यह स्नेह सिंचित धूप
आज है बस शेष केवल
राख का स्तूप
यह राख का स्तूप !

इस राख के स्तूप पर
दूर—दूर से आये हुए तुम्हारे श्लथ चरण

यदि केवल अपनी थकान ही दे कर वापस चले जायँगे
तो भी यह गति पा लेगा
इस लिए इस पर तुम अपने घाव ही अर्पित करो
दे जाओ इसे अपने पग-तलवो मे गुँथे काँटे
यह स्वीकार करेगा क्योकि वह तुम्हारे स्नेह की रक्ताभ आभा से
सिक्त तुम्हारा ही एक अग होगा।

उन फूलो को
जो तुम्हारे हाथ मे बन्दी है
उन्हे अपने ही चरण पर चढा लो जो गतिशील है।
या उस वाटिका म ले जाओ
जहाँ नीले पीले इन्द्रधनुषी फ्राको मे
नन्ही बालिकाएँ धूल के महल बना रही होगी
जहाँ आगन बाजा बजा कर
शुभ्र और नन्हे भोले बच्चे 'ता-ता थैया' की ध्वनियो से
समस्त आशकाओ पर विजय पा लेते होगे
जहा तलवारे टूट चुकी होगी
बन्दूक की बारूद ठण्डा हो चुकी होगी
साइरन, फौजी लबादे और घटाटोप आवाजें
पैराम्बुलेटर की गतिशील आवाज़ के साथ
कुचल दी गयी होगी।

अपनी अर्चना की स्निग्ध धार
उस बजर धरती पर डाल दो
जहा घास के नवाकुर जन्म ले सकें
उन्हे उन घास की जडो मे समा जाने दो
जो नव अकुरित हो कर
उस तीन पहिये की गाडी वाले बच्चे को
अपनी गोद में खेलने का अवसर दे सके
इन फूलों को कुआरी महक को
उस भविष्य पर छा जाने दो
जो घने कुहासे के बीच उग रहा है।

उन्हे इस टूटे हुए मकबरे पर मत डालो
क्यो कि यहाँ उस की हँसी मसल दी जायगी
उन की सुकुमार पखुरियाँ सूख जायेगी
यह तेज़ और तूफानी हवा उन्हे आँधी मे मिला देगी
क्यो कि इस राख के स्तूप की पृष्ठभूमि मे
एक भयकर महामारी का सक्रमण
सो रहा है।
फूल डस जायेगे
इस लिए इन्हे उस वाटिका मे
उस बजर धरती पर
कही डाल दो
ताकि ये जीवित रह सक।



## जो किसी का न हो सका

जो किसी का न हो सका
आज—अपने से पराया रहा—
पाया गया—एक अहम् का अगारा
मुट्ठी मे बँधा, वन्दी, पराजित अपने से ही हुआ
राख के स्तूप-सा निर्जीव पिण्ड
हवा का झोका
      टूटा      बिखर गया।

बिखरना भी सार्थक होता
यदि चिनगारी वन इस अन्धे कुएँ मे जीवन को मापता
टूटना भी अर्थ देता
यदि विश्रृखल सासो मे
जीण, जजर, पुरातन अस्थियो का धरोहर मात्र होता
किन्तु सस्कारो की कुपित सीमा से
युद्धो मे जन्म लिये भावो से
इतिहास के जगो से
म्यूजियम के जिरहबख्तर से
टूटी बन्दूक से
            लँगड़े तैमूर से
क्या मिला ?

      बच्चापन
      खोखली आवाजे
      गत्यवरुद्ध लुटेरो की परम्परा
      नारे और नारा की मृतप्राय जजरित प्रेतात्माएँ
      जगलगी तलवारें
      मधुमक्खी-सी जीतें

और बौनों-सी हारें
यही मिली
अंगारों की सुख आभा से यही मिली—
जो किसी को न हो सकी।

फिर पाया क्या ?
एक अहम् का अंगारा
मुट्ठीबँधा, बन्दी, पराजित अपने ही से हुआ
राख के स्तूप-सा निर्जीव पिण्ड
हवा का झोंका
टूटा—बिखर गया।



## समय एक कार्निवाल

कार्निवाल के खुले द्वार पर
खाली-खाली पैराम्बुलेटर
दूध की शीशी—खाली बोतल
टूटे-फूटे सड़े खिलौने
प्लास्टिक के ये नन्हे बौने
पड़े हुए हैं शव-से सूने—
कार्निवाल के खुले द्वार पर
सोती आया सोती काया।

भीतर अन्धकूप की खाई
और मौत का कुआ गहरा
गोल घड़ी पर तीर निशाना
चूक चूक फिर पछताना
और देह मे आग लगा कर
आतंकित करने वालो के ढोल-नगारे
दांव-पेंच के ये पौवारे
हो-हल्ला
अल्ला अल्ला
कार्निवाल के भीतर कितने
दाव पेंच के घिरे फसाने।

जलते रथ पर
अगारो पर
बीहड़ पथ पर
तलवारो पर नाच रहा है प्रेत-योनि-सा

पर अरगन बाजे के
खोये सरगम बजा-बजा कर
बेच रहा कोई कठपुतला
अमृत धारा   अमृत धारा
कानवाल के भीतर कितना
सकट सम्बल
सकट सम्बल ।

दवा बेचने वाला पुतला
मौन खडा है दाँत निकाले
भीतर-बाहर एक-एक कर रग बदलता
अण्डकार-सा सॉसर चिकना रग लगाये
चुम्बक का विद्युत् हण्टर ले
सरकण्डे के ऊपर यो ही
नचा रहा है प्याले-अण्डे ॥
दात-तले छूरी-काटा है
चिड़चिड़े से ऐंठी-ऐंठी निकली जिह्वा
सूली सी लम्बी गरदन है
टेण्ट कैम्प से ढलुए माथे पर अकित है
बुझी चिता की,
सिद्ध शवो की
भस्म भुजाएँ ।
यही सत्य है, इधर न देखो
कुछ मत पूछो
जिजर बॉटल—काली भी है
प्रश्न चिह्न-सी झूल रही है
जातक-सी ये कण-विभाएँ
और पोटैटो फिगर जैसी
ओठो की दुबल सीमाएँ
बूट-ब्रशो-सी काली मूँछें
युद्ध-क्षेत्र की खाइँ जैसी

रिक्त कपोलो की गहराई
भस्मित वायुयान के झुलसे
डने-जैसे जर्जर कन्धे
गिलगिट की स्ट्रेटिजी जैसी
मेरुदण्ड की गढी हड्डियाँ
सर्चलाइट की मन्द बैटरी जैसी छाती
किसी साइरन-सी आतंकित गहरी साँसें
खुद शरीर पर अगणित घावो से
पीडित, क्रन्दित, व्यथित बिचारा
गर्म चाय को बना रहा है
अमृत धारा
अमृत धारा।

यह मनुष्य है युग का प्रतिनिधि
नये वर्ष का नया अतिथि है
कार्निवाल मे जोकर बन कर
नयी दवाएँ बेच रहा है
लाल-बैंगनी, नीली पीली
इसे देख कर मत हट जाओ
यह जो बडा लबादा पहने
दाँत निकाले यहा पास मे
खडा हुआ है
उस के भीतर मुझ-सा, तुम-सा ही ढाचा है
नया वर्ष है मैं ने इस को ही इस युग का
प्रतिनिधि मानव स्वीकार किया है
यह बेचारा
बेच रहा जो अमृत धारा
अमृत धारा।

आओ साथी
युगो युगो से बढे हुए लकडी के हाथ काट कर फेंको
हरी खपच्ची-जैसी टागें काट-छाट दो

मुख पर का यह चूना-कालिख अब धो डालो
बड़ा लबादा कार्निवाल के गगनविचुम्बी लम्बी लग्गो पर लटका दो
अमृत धारा की शीशी मे बेच रहे बम्बे का पानी यहाँ फेंक दो
आओ आओ
इस पैराम्बुलेटर की रिक्त उदासी
टूटे फूटे सडे खिलौने
प्लास्टिक के ये नन्हे बौने
सब के सब को एक नयी तरतीब दिला दो
बूढ़ी आया को पेन्शन दे
एक सीरियस-सा मजाक जो यहाँ अभी तक
हम-तुम आपस मे करते थे
उसे बदल दो
अपना हैट उतारो सिर से
सरकण्डे-सी खाली प्याली
गम चाय के दो-दो चुल्लू
आओ पीये
हार रेस का टिकिट जलायें
आग बनाये
बैठें, तापें
कार्निवाल के भीतर का यह अन्धा कूआँ
और मौत का गहरा कूआ
सभी बन्द कर
नये-नये विरह के छन्दो मे कुछ गायें
एक दूसरे से बिन बोले
अनबोल स्वर मे बतलाये
कार्निवाल के खुले द्वार पर
आओ हम-तुम आग लगाय ।



## निर्जीव समय के मस्तक पर

ये टिक्-टिक् करती घड़ियाँ टगी हुई गिरजाघर मे
निर्जीव समय के मस्तक पर
गतिशील विन्दु की घडकन-सी
ये वता रही
इक युग वीता
इनसान जिया था कभी
किन्तु अव तक जाने क्यो नही मरा
वस
इसी घडी की सूई-सा
दो हाथ पसारे नतमस्तक
खोखले शब्द का अर्थ वताता
जिन्दा है।

चाहे जितनी सूई घूमे
है परिधि एक
मन्द सितारो की धक्-धक्
क्षण-क्षण आहत
अज्ञात चन्द्र का वाहक-सा
इनसान आज भी जिन्दा है।

हा, कभी आदमी अर्थ नही, सन्दर्भ वना था
जीवन का जव अर्थ सिद्धि, अभिव्यक्ति क्षितिज पर झलकी थी
वह सन्दर्भयुक्त जीवन-सत्ता थी
अपराजेय आत्मा की जीवन थी
जव कलश शिखर पर खडा-खडा
उस ने धरती को जाना था
आत्मा को पहचाना था।

पर आज धूल ढुलक गयी
विष-जाल बिछा कर धरती पर
सब नष्ट हुआ जीवन का स्वर
आत्मा भी नष्ट हुई गति से जर्जर ।

ओ सपने वाले इनसान
यह डगर खतरे से भरी हुई
अनजान सुनहले सपनों से धूल-भरे छोटे शिशु को
अपनी रक्षा से दूर करो
तैरा दो सागर-लहरों पर
अपनी बाँहों से मुक्त करो
वह पथ अपना स्वय बना
जीवन का अर्थ निभा लेगा
सन्दर्भ तुम्हारा कलुषित
इस की छाया उस पर से यदि
नही हटी शिशु मर जायेगा
दुर्घटना होगी
ये जगलगी सूई से हाथ तुम्हारे
पीस देंगे उस अकुर को ।

सस्कारहीन ही जीने दो
अपने से उठने-गिरने दो
हर जीर्ण पुरातन अन्त कि जो
सम्भावित है, स्वाभाविक है
हो जाने दो
यह अन्त स्वस्थ जीवन देगा
अकुर से छाया दूर करो
छायाएँ ज्योति निगलती हैं

यह टिक् टिक् घडिया कहती है
समय कभी भी बँधा नही—वह बढता है
वह बढता है ।



## समय : नया साल

नये साल का नया दिवस फिर आयेगा
आज लग रहा—
इस धरती के ऊपर
मुर्दार झुर्रियों के बासी फूला-सा
तारों वाला आसमान
किसी काठ की तख्ती पर
अंकित समय-चिह्न मात्र!

किसी जख्म पर, फोड़े पर
हल्दी, हरताल, प्याज की पुल्टी
जैसा धूमिल, पीला, उदास
यह चाँद और चाँदनी जैसे
टिंक्चर की बोतल किसी घाव पर—
बिखर गयी हो सहसा सत्वर
श्वेत, नम घाव पर फैली
खुली बैंडेज जैसी लगती
नभ-गंगा की पगडण्डी
मरहम-पट्टी का विधान!
यह काष्ठ-मूर्ति-से बैठे संसद् में
मरियल वृक्ष कि जैसे ऊँघ रहे किसी अस्पताल में
क्लोरोफॉर्म-गन्ध में गर्भित
पीड़ा से व्याकुल रोगी मरीज!

सात डॉक्टर सप्त ऋषि से मौन खड़े हैं
नब्ज देखते हैं उस ध्रुव का
जो जड़ रोगी जैसा आ कर जिद्द पकड़ कर बैठ गया है!

हाड खडकने जैसे पत्ते
डोल रहे हैं, आरी ले कर
काट रहा फ्रैक्चर को हड्डी कोई फूहड
नया डॉक्टर।
हवा वह रही लगता जैसे
किसी नर्स का उडा दुपट्टा
कही दूर पर मैदानो मे हवा जूझ कर
गिरी धरा पर
लगता जैसे वोतल-शीशी लिये नर्स
है गिरी रपट कर।

एक पुराने नुस्खे-जैसा
कही गगन पर भटक गया है
नन्हा बादल
स्ट्रेचर पर लिये जा रहे सभी वार्डर
अति गम्भीर परिस्थिति वाले रोगी को टाँगे
एक नेवले जैसा पडा हुआ टिकठी पर।

वहा दूर पर गिरी एक उल्का अम्बर से
जैसे सहसा झटक दिया हो पारा सारा
थर्मामीटर के अन्तर का।

धरती जडवत् देख रही है
जैसे किसी भयानक घटना से अतिक्रन्दित
कोई गृहिणी भटक रही हो
अस्पताल के लोहे वाले फाटक पर
आचल सरका
केश अव्यवस्थित
सूनी आखें
लगता जैसे अभी-अभी कुछ हो जायेगा
हो जाना भी ऐसा लगता

जैसे भुन्नाती नर्स क्रोध मे
रात बीत जाने पर ज्यादा ।

दूर खड़ा चौराहा लगता
सक्रामक विभाग हो जैसे
किसी भयकर अस्पताल का ।

कोई माँ है जो सन्नाटे मे सोयी है
अस्पताल के भीतर अपने—
जारज पुत्र का रोग लिये-सी
रह-रह कर वह स्वप्न देखती
अकुलाती, फिर सो जाती
गहरी नीद नही आती है
लगता जैसे सभी कह रहे—
नही बचेगा   नही बचेगा
यह जारज है पुत्र तुम्हारा
नही बचेगा ।

कही दूर पर बजा साइरन
आग लगी है गगा तट पर
घास फूस की बनी झोपडी
कभी जल गयी
क्या जाने क्या होगा कल को
पौ फटने पर !

आग बुझाने वाली गाडी
अजर-पजर गिरी पडी है
ऊँघ रहे है ड्राइवर-शोफर
किन्तु बज रहा अभी साइरन
सन-सन-सन-सन ।



शान्ति के लिए

# शान्ति किस की है ?

शान्ति किस की है ?
यह उस कुलवधू से पूछो
जिस की माग की लाली से
ये पताके, ध्वज, तोरण तुम ने सजाये है
जिस ने भोर का सपना विपैल नागा के समक्ष अर्पित कर दिया है
जो विधवा-सी महज रँगरूट की प्रतीक्षा मे
कई बार विचारो की वेश्या हो गयी है
क्यो कि उस का कुलपति इस शान्ति की मर्यादा मे
सगीनो के बीच कही खो गया है
तुम ने शान्ति के नाम पर युद्ध की सीमाएँ बढायी हैं
घरो की शान्ति चुरायी है—शान्ति यह किस की है ?

शान्ति किस की है ?
उस भावी सन्तान से पूछो
जो विकृतिया म जीने के हेतु जन्मा है
जारज है नही लेकिन बनाया गया है
जिसे तुम उत्तराधिकारी समक्ष दे जाओगे
अपनी मानसिक क्षुब्धता की
आत्म-आहत परम्पराएँ
सच मानो ! तुम ने अपना विष उगल दिया है उस आगन म
जिस म भावी सन्तान के विकास की आशा थी
तुम ने वह आशा चुरायी है
सक्रमण की पूजा की शान्ति चुराने वालो
शान्ति यह किस की है ?

उस शिशु से पूछो

जिस के बिस्किट, एडाक्सलोन, खिलौनो की फैक्टरी पर
तुम ने साधिकार बन्दूको, तोपो, बारूदो की पैदावार शुरू की है
पूछो तुम उस रोते शिशु से जो इन सुविधाओ के बिना
लिवर, ड्राप्सी, सूखा रोग से पीडित हो मर रहा है
तुम ने जिन्दगियां चुरायी हैं
शान्ति यह किस की है ?

मै भी शान्ति चाहता हूँ
लेकिन वह शान्ति नहीं
जिस मे दोस्ती और दुश्मनी का
[illegible] एक खेल हो
तुम बन्दूको को बुरा और तलवार को अच्छा कहो
बम को गाली दो
और बारूद जेब मे लिये घूमो

मुझे वह शान्ति नही चाहिए—
जिस मे—
नासूरो को रोकने के लिए तुम अंगारो के [illegible] निचोड़
का नाटक करो।

जितना नास्तिकता के साये मे चमकती हुई तलवार
मैं आस्थावान् हूँ
इस लिए मैं शान्ति चाहता हूँ
मैं भी शान्ति चाहता हूँ ।

तुम दोनो ऐसे प्लास्टिक के गुड्डे हो
जिस की पेंच खराब हो चुकी है
इस लिए पहले इस के कि तुम शान्ति की बात करो
तुम्हे उस छोटे बच्चे के सामने घुटना टेक कर सलाम करना होगा
जो तुम्हारी लँगडी टाग और हकलाती आवाज पर जी खोल कर
हँस सके
उस की मुक्त हँसी ही वास्तविक शान्ति है ।

तुम दोनो ने
नारो के शोर वो गुल मे
आवाजो की हत्या की है
शब्दो को निस्सार बना कर छिलके जैसा
यहाँ-वहाँ, कूडे-करकट म फक दिया
और
लेखनी की पवित्रता सगीनो की नोक बन गयी
फौलादी नोको से लिखना 'शान्ति'
(एक लाश की छाती पर बेरहमी से)
एक व्यग्य है तुम दोनो का ।
और तुम्हारे इस उपक्रम मे
शान्ति मर गयी
शेप बचा यह शोर शराबा,
शान्ति मर गयी

ठीक उसी दिन जिस दिन तुम ने
लाल और ये पीले-नीले, गोरे-काले वने-वनाये
शान्ति मर गयी ठीक उसी दिन
जब आहत हो व्यक्ति मरा था तुम्हारी मशीनो के नीचे—
हैवी बूट की भारी टापो मे हो घायल
वह निरीहता एक व्यक्ति की मौन विसर्जित हो डूबी थी
शान्ति मर गयी ठीक उसी क्षण
जब नागासाकी की विभीषिका मे तुम दोनो
अपनी केतली की भरी चाय को आँच लगा कर पका रहे थे
और शान्ति के शव पर बैठे शव को शिव करने जाते थे
और शान्ति मर गयी थी उस क्षण ही।
जाने कब से चली आ रही यहाँ प्रथा है
पहले जिस की हत्या करते, ठीक उसी की पूजा करते मर जाने पर
यह लाशो की पूजा—अभिनय
शेष रहेगी कब तक आखिर !

कलम पर, तूलिका पर, यह तुम किस की लाशें बेच रहे हो
ओ ओ शान्ति के लेखक, शान्ति के प्रचारक कलाकार
कला शान्ति की प्रकृति है, उस की स्थितप्रज्ञ भाषा है
वह बेची नही जाती नारो पर
अरे ओ शान्ति के प्रचारक लेखक
आदमी की मूल्यगत संस्कार दा
शान्ति ज्ञान है, विडम्बना नही।

इन मुर्दा प्रतीको को कलम पर मत चढाओ
भाषा वरदान है इस से रक्त मत भुनाओ
शान्ति तुम दोनों की युद्धगत निष्ठा है
फास पर हल्दी का प्लास्टर चढा कर नये उपादान मत ढूढो

आँखो मे अश्रु गैस डाल कर शान्ति के लिए मत रोओ
विक्षिप्त शान्ति का अधिकारी नही है
षड्यन्त्र शान्ति की विडम्बना है
इस लिए अपने हाथो के पक्षियो को मुक्त करो
इन्हे और इन की लाशे लेखनी पर, तूलिका पर मत चिपकाओ ।

आओ ! अपने गीत मे, सब चित्रो मे
आत्मा की वह व्याकुल आस्था ढूढें, परखें
जिन के अन्तर मे पीडा की सहनशक्ति ही बन जाती है एक मसीहा
जिस मे शब्द और रेखाएँ भर देती है इस जीवन मे
नयी व्यजना की मधु रेखा

आओ, अपनी रँगी लेखनी को धो डाले
उन रगो का मिट जाना ही अमर शान्ति है
जो अर्थो मे, सन्दर्भो मे व्यर्थ भ्रमो का ताना-बाना
बुनते रहते
सृजन स्वय शान्ति की मर्यादा है
इसे न भूलो ।



# एक दर्द और कई परिवेश

## एक दर्द और पाँच स्थितियाँ

हाँ।
एक बात है
खामोशी भी साथ है
किसी माहरू के मुखड़े पर
सुरमई दुपट्टे-सी
बहकी हुई रात है।

सितारे—
पायजेब के घुँघरू
जो जख्म मे छूट गये
टूट गये
साज़ और नाज की अँगड़ाइयाँ
दर्द बनी, दवा बनी, छूट गयी
यह रात नही
चादनी रात का सुर्मा है
यह रात नही
एक छलकी हुई शराब है
हा, एक बात है
हर दर्द हयात है।

यह रस मे भीगा हुआ सगीत मगर
उधर से उठ रही कराह है
हम तुम तक नही इनसान
दर्द मे फैलने की ताकत है
एक दुनिया ही परीशान है
यह दर्द जो इश्क मे जागा है

इसे उस साज़ की जरूरत है।
जो बंधी न हो हम-तुम तक
हा, कि जिस मे पहचान हो
दद दर्द है   दर्द की किस्मे नही
दर्द इक मिजाज है।

एक सूखे वृक्ष की नगी-सी डाल पर
एक नशेमन है तिनको का
ओस चाँदनी बादलो का सरगम
बिजलियो की आग और हम

सोते मे हँसते हुए बच्चे
दर्द से, दु ख से आगाह नही
[ लेकिन
यह नस्ल है इनसान की
जो भयानक सपनो की बदहवासी
बच्चो की पलको तले ढाल रही ]
मगर एक बात है
हर आधी विछल कर चली जाती हे
आदमी है
मगर फ़ौलाद है
जैसे कि कोई राज है।

हा, राज भी सही
मगर राज उस दुनिया का
हर नगे भूखे का
सूखी हुई एनिमिक मा का
( इश्क को, राज को इस हद तक लाना होगा )
इश्क इश्क है, मजाक नही।

## एक दर्द और पाँच कल्पनाएं

हाँ,
एक दद को स्थिति है
जो चैन नही लेने देती है
यह बेचैनी
ये पीडाएँ
ये मानसिक वेदनाएँ
उस उल्का-सी है
जो गिरती है
शून्य मे लुप्त हो जाती है
लेकिन जाने क्या
उस म अज्ञात नोक एक ऐसो है
जो छू जाती है
हम को, तुम को
सब को।

दद एक आन्तरिक घुटन नही
इस को सम्बद्ध होने दो उस उल्का से
दर्द एक प्रकृति है अनुकृति नही।
आग की फसल आसमान मे बोयी है
धधकते अगारे-से तारे ये छिटके हैं
आकाश गगा के किनारे
एक हल की लकीर-सा
आकाश की छाती पर एक दाग है।
हर दाग एक करुणा की मुद्रा है
बाइबिल है, गीता है
इसे आत्मनिष्ठ ज्योति मे पकने दो

दद एक निष्कृति है अपनी सीमाओ की
उसे मुक्त हो बहने दो
दर्द अनुभूति है, सवेदन नहो।

एक खनकती हुई आवाज़
सारे वातावरण मे गूजती है
लोहे से लोहा टकराता है।
उफ कितनी विह्वलता है।
पागलपन से भरी हुई ये विक्षिप्त स्थितियाँ
तूफान नहो
इन को मलयवासी वह स्फूर्ति होने दो
जो अपनी वेदना-सवेदना दे जाती है
उस शाख को बँधी हुई कुण्ठा को
जो फोडे-सी उग आती है कली के रूप म।
पागलपन विश्रृखलता है
कली-कली कुण्ठित थी थी फूल बन हँसने दो
गन्ध बिखरने दो—दद की सवव्यापी सत्ता दा
दद दबा हुआ घिनौना जख्म नहो
अनुदान है यह—स्वगत यात्रा का प्रस्फुटन।

जेठ की तपती दोपहरी-सा यह जीवन—क्या होगा इस मरुथल मे
जहा अतृप्त तृष्णा दौडती हो जाती है—अपने दिग्भ्रम म
किन्तु
दौडना और गति देना अपने विचारो को—स्वीकृति है व्यापक दृष्टि की
जो पैदा करती है मरुथल मे भी आसिसो को
दर्द लक्ष्यहीन हो मरु मे भटकने दो—सस्कारो को
यह ढूँढ लेगा स्वय—वे सभी आसिस जहा जल है
दद यह जीवित भटकाव है
निष्क्रिय शान्ति नहो।

हा, दद को पागल हो भटकने दो उस सीमा तक

जहा हर प्रार्थना व्यापक हो शब्द को घनत्व देती है
आवाजें दर्दभरे लोहे से गम्भीर
मगर फूल-सी होती है
हर पीडित को फूल चुन लेने दो
दर्द दद है मजाक नही।

■

## एक दर्द और पाँच सम्भावनाएँ

और रोज से दद
आज कुछ तेज है
अखवारो की खबरें पढने के वाद भी
कोई नही है हरकम्पन
वस यही लगता है
फूल आज रात चुने नही गये
उन्हे तीर से बेधा गया
शाख से अलग भी नही हुए
एक लटके हुए फुल स्टाप से
वे शाख मे ही मर गये।

कितनी वडी ज्यादती है यह
आदमी दाग लिये फिरता है
आत्म-हत्या का
हर मुर्दार घाव का चमडा
लाश है असमर्थता का!
फूल की कितनी वेवसी है
मगर
है कहाँ एक तरन्नुम-सी जिन्दगी
कौन है जो बेजार नही अपने से
एक उठते हुए धुएँ के साये मे
पौध की पौध घुटी जाती है
रोशनी कहाँ है ऐ हमदम
अँधेरा ही डसे जाता है
दर्द से कह दो जहर पी लें खुद
पौध को उगने की ताक्त दे

उन का उनना सहज नहीं
उन का यह भी एक हक है।
दर्द महसूस करना है बात और
उसे अर्थ देना हकीकत है।

लय अगर गति नही बनती
नही सगीत का खुमार है
वात क्या है इस पीढी को
उमस मे भी जीने का
सहज ही मिल गया अधिकार है।
उमस दर्द की वह स्थिति है
जब सम्भावनाएँ जन्म लेती है।
अधिकार अकर्मण्य हो कर नही रहता
आस्था को जन्म देता है
यह उदासी प्रसवहीना नही
इस मे भी कल्पनाएँ है
आदमी बेबस हो जितना भी—उस म जीने की ताकत है
सम्भावना यू ही नही होती
उस मे भी कल्पनाएँ है।

आदमी आज वहुत भटक गया—शायद वह दर्द से भी दूर हुआ
हर उभरती हुई रोशनी सहसा—सगीन की छातियो पर सो गयी
अगर यह भी कही सम्भव हुआ
एक खौफनाक सपने-सा आदमी भी अगर मिट गया
तो इन खण्डहरो की साया मे—कल्पनाएँ फैलेगी
विचार महज़ हद नही हैं इन्सां के—वे दर्द से उपजते हैं
दर्द वह जो महज़ नही जपता बल्कि होता है आत्मा का।

हाँ, वह आलम वहाँ तक भी है
जहाँ एक जर्जरित माँ चूल्हे के पास बैठ

घास की रोटी खिला बच्चो को आंखो मे
आसमान से उतरने वाली परियो की कहानियां ढालती है
दर्द जानती है, जन्म देती है
नयी सम्भावना की स्थिति को !



# एक दर्द और कई सीमाएँ

हाँ
यह मै हूँ
अकेला राहगीरो से अलग
मगर
मेरे साथ भी एक कारवा है
जिसे तुम कभी नही देखोगे
[ मैं—
महज़ राख का गुबार नही
राह की गति भी हूँ
जिसे तुम नही समझोगे ]

वह विराट स्वप्न जिस के समक्ष सारा ब्रह्माण्ड केवल तीन
कदमो मे बँध जाता है
वह अस्तित्व जिस मे केवल अनुभूतियो के क्षण समय के
मापदण्ड होते हैं
सच मानो मैं अकेला हूँ इतना अकेला जितना प्रत्येक नक्षत्र दूसरे से
अपरिचित किन्तु अपरिचिति की किरणो से प्रदीप्त
अकेला किन्तु उस सामूहिक चेतना से अभिभूत
शायद माला के उस मणि-सा जो केवल इसी लिए शोभा पाता है
क्योकि वह माले के दानो से सम्बद्ध किन्तु पृथक् होता है।

मेरी सीमाएँ—अस्थि-पजर देह की, पिण्ड की, दृष्टि की, बुद्धि की
लेकिन मैं तुम्हारी उधार ली हुई दृष्टि ले कर क्या करूँगा
क्योकि वह दृष्टि मेरी नही होगी, तुम्हारी होगी
मेरे अस्तित्व के नाश पर वह बनी होगी।

मेरी सीमाएँ हैं—आस्था की, विचारों की, संस्कारों की
लेकिन मैं केवल अपनी आस्था ले कर क्या करूँ
क्योंकि तुम केवल समूह को पूजते हो
जिसमें सब कुछ है, केवल व्यक्ति नहीं है।

■

## एक परित्यक्त फाँसी की रस्सी का दर्द

दर्द
दर्द आज पहले से भी कुछ तेज़ है
किन्तु मन मारे अजगर-सा
नीरस बेलौस
उत्तप्त बालुका-कण-सा
सरक आता है
ढह जाता है
वह जो चट्टान था
तिरोहित हो गल जाता है !

दावाग्नि मे चिल्लाते वन-पशु सी
मेरे अन्तर्मन की प्रेत-काया
अग्नि मे होम होने से पहले ही
डूब-डूब जाती है
ओ दर्द
ओ प्लावन
ओ अतिरेक
मेरे विवेक के उन्मेष
मैं जो क्षण-क्षण गलता हूँ
कही ठहरता और ढहता हूँ
सच मर्यादा का पतन जहाँ क्षण क्षण हो
वहाँ मैं विवेक का सहोदर
दर्द हूँ,
वह तट की रस्सी हूँ
जिस मे यात्रियो की नावें आ कर बँधती हैं
लहरो की चट्टानी चोटें

प्रतिक्षण टकराती है।

अब नही हूँ मैं
तट की, किनारे की लगी हुई टोर सही
डूबा नही हूँ मैं
ओ रे नौका-यात्री
ठहर
ठहर
मैं सर्प नही
तट से लगी हुई रस्सी हूँ
आधी मैं रेत
आधी मैं सलिल
मुझ से तुम डरो नही
मैं महज रेत और सलिल के बीच
की स्थिति हूँ।

दद
दद वह महारा है
जो रेत की विवशता
प्रवाह की चेतना मे मेरा
मेरे इस खालीपन का आधार बना
दद जो मरुस्थल से निचुडा है
दर्द जो सलिल से उमडा है
दर्द। जो विवेक का पिता है
दर्द जो मेरा विधाता है
मैं हूँ
वह एक रस्सी
आधार
आलम्ब
जिसे गले म बाँध
कोई आत्म-हत्यारा
इस तट पर आया था
किन्तु जो कायर हो मुझे छोड

वापस लौट गया
उसी आतंकित जीवन
और आतंकित परिवेश में।
और मैं
आज तट के खूंटे से बंधी
विश्राम की धात्री हूँ
ठहर
ठहर
ठहर
ओ यात्री
मैं कभी आत्म-हत्या करने वाले के गले से बंधी थी
कभी मैं विराम थी
आज मैं विश्राम हूँ
तटस्थ न तब थी
और न अब हूँ
दर्द तब भी था
और आज भी है।

रेत के फूल   रेत के बिम्ब

## मक्खियाँ, छिपकलियाँ और हैवी बूट

एक कल्पना है
दिमाग की पर्तों मे
जैसे बन्द कलियो मे
बन्दी—
सुरभि, गन्ध, मौत,
धूल, काँटे
कठोर चुटकियाँ
( माली की मसलन की )
सादा स्लेट पर
काँपती हुई छाया
( एक धुधली रेख
लेखनी मे बन्द )
आकुल उभरने को
व्याकुल कल्पना है।

कल्पना अजीब है
मक्खी ने मकडे को आधा दबा लिया
पतगा छिपकली को
आधा निगल गया
गिरे हुए पत्ते—
आधी को रोके हैं
अर्थी के कन्धा पर
जिन्दा आदमी—
मरघट को जा रहा

निराशा ने आशा को ज्योति दी
मौत मर गयी
कोरिया की छाती पर
पडा हुआ हैवी बूट
सिपाही के पैरो मे
रक्तसना सड रहा !

यह मक्खी
ये छिपकलियाँ
ये हैवी बूट
कोरिया में पनप रहे
आदमी शायद मर गया
पतगे जी रहे !



## एक फूल का गुलदस्ता अँगीठी पर सुलग रहा

एक फूल का गुलदस्ता
अँगीठी की आग पर झुलस रहा
फूल—अंगारो के बीच
धुएँ मे घुट रहे
कुछ फ़ौजी सिपाही
ठिठुरती हुई सर्दी मे
अपना हाथ सेक रहे।
एक परिस्थिति यह भी है
उस सारी सुन्दरता को
वह झुलसे
और झुलस कर
शब्दो की नीलामी बोली पर
कुछ कह न सके।

एक जल चित्र
चिनार की डालियो के बीच टँगा
हर कौए को चोच मारने का मूक निमन्त्रण
गीधो की पंक्ति बटोरे
दीमको की लकीरो को
मूक आमन्त्रण दे
और जब
चिनार की डाल भरभरा कर गिरी तब
तब यह
अपनी पीठ पर दीमक भरता हुआ
अपनी सुन्दरता पर दाग [illegible]

व्यग   जैसे किसी ग्रहण मे
गाय और भैंसो पर गोबर की लकीर
सुन्दरता     जैसे दु शासन  के हाथ म
बढती हुई चीर

एक परिस्थिति यह भी है
गीध के चगुल मे कागज़ टँगा रहे
फौजी सिपाही
हाथ सेकते रहे
चील और कौओ का जमघट
वैसा ही बना रहे !



## कोमल पलको मे ये आँसू

कोमल पलको मे ये आँसू
नमित नयन ये गीली आँखे
धडकन भारी, असमय आहट
सकल विकल नगो सडको पर
गगा-तट पर
कोढी के नगे हाथो पर
दो-दो आँसू
दो-दो आँसू !
[ राशन, गल्ला
ईंधन मँहगा
कफन मुफ्त है
मरघट पर का कर बाकी है
हरे बास बेकीमत मिलते
और किराये पर ढोने को बहुत मिलेंगे
किन्तु ढो रही मुरदा गाडी मुफ्त लाश को ]
पागल कुत्ते डोम भर रहा
जीभ काट कर दवा बनेगी
जनश्रुति का यह भी कहना है—
कुत्ता के काटे जख्मो को ठीक करेगी
पागल कुत्ते बहुत बढ रहे
बेहद शायद !
[ शोर बढाओ
पथ फैलाओ
कदम कदम धरती सिकुडी है
हम मे, तुम मे, सारे जग मे
गीली पलको मे आँसू मे
पशुता-पशुता शेष बची हैं । ]

■

## सकेत-पथ पर

सकेत-पथ पर
मौन, अथ पर
प्रगति, गति पर
 श्रुति पर
मृत्यु, क्षति पर
 वफ-सी यह धवल निश्चल
 वेदना का लेप
 मेरी भावना की रेफ अमित क्रन्दित
 माँगती है प्रश्न ? जिज्ञासा सतत
 अविराम गति पथ
 मागते है प्रश्न !

मेरे प्रश्न का विश्वास सब पर
 ज्ञात सीमा तक पर
 सवस्व पर
 सदर्भ अथ पर
 मौन इति पर, प्रगति पर, सकेत-गति पर !

व्याल अकित चरण चचल
क्षेत्र ससृति का अचल चल
विकल कल का स्वप्न दुबल
नही होगा
नहो होगा आज की सतप्त, सक्रामक मनुजता
का खुला अपवाद
भीषण वाद
 केवल वाद !

कौन है यह—
लाल पट्टी जख्म पर मत बाँध
यह दराजें हैं इन्हे लाल-पीली शीशियो के चूर से मत साध
दवा सतरगी नही होती
दद की सीमा नही होती
दर्द है निस्सीम
मेरे दर्द मे यदि हो सके तो मिला दो
वेदना का भाग
अपनी वेदना की आग
तम को पूर्ण कर दो
पूर्ण आहुति के लिए सम्पूर्ण कर दो
एक अथ पर
एक पथ पर
प्रगति पर
सकेत-गति पर
वेदना का लेप दे दो
मुक्ति है निष्काम !



# कुछ गलत कविताएँ

## कुछ गलत माध्यमो से
## सही वक्तव्य

धोबी की कॉपी से
श्रीमती बसल ने जब कपडे मिलाये—
तो देखा एक गहरा दाग—
उन की 'रॉ सिल्क' की—
साडियो पर गहरा हो गया था।

एक खरोच साडी पर लगी थी
एक शिकन माथे पर उगी थी
एक गन्ध दिमाग मे थमी थी
और वह दाग जो घुलने की वजह से और चटख हो गया था
उन के चारो ओर एक घेरे-सा बढता गया।

श्रीमती बसल ने
एक बार धोबी की ओर देखा
उस के सावले रग और अनपढ चेहरे को पढा
और अच्छी धुलाई न करने पर
उस की धुलाई काट ली।

लेकिन जब उन्हो ने सिर उठाया
देखा
सामने आईने मे
एक दाग उन के गाल पर था
और ओठ दाता के नीचे
और डॉट पेन का फिल
सूख चुका था।

■

## एक गलत मसीहा की तलाश मे
## दूसरे सही आदमी को सूली

गिलहरी के रग का कोट पहन
लोमडी की खाल का दस्ताना
मुझे एक अँधेरी गुफा मे मिली
एक खूबसूरत 'हवसाना'

एक कागज के हाशिये पर
नाखून से लिखा गया इतिहास पत्र
एक जिन्दगी पर लानत-सी
लादी हुई एक लीक

वेस्ट पेपर वास्केट मे फेंके हुए कागज
प्रेम-पत्र
एक जलती हुई आलपीन की चीख
पानी पर तैरते दो होठ
हथेलियो पर उगते हुए दो छाले

कल रात बाजार मे अण्डो का भाव बढ गया
शहर की तमाम औरतो ने उन्हे खरीद लिया
और
दुनिया इस घटना के बाद
एक मसीहा की तलाश मे निकली
उन्होने हर शहर, हर गली, हर होटल रेस्त्रा मे
उस मसीहा की तलाश की
मसीहा होटल मे अण्डे न मिलने से नाराज था

शहर में आदमी और जानवरों के सहअस्तित्व से परेशान था
वह हर जगह से उचटा बेगाना-सा भागता रहा
लेकिन इसी बीच मैं सूली पर चढ़ा दिया गया
क्योंकि मैं जिन्दा था और नाराज़ नहीं था।



## *एक गलत याद के सहारे*
## *दूसरी सही तारीख की अनुभूति*

रात देर से
नीद लगी सो गया
नीद खुली, समझा सुबह हुई
देखा, रात थी।

सो गया बिना नीद
सुबह तक सोता रहा
जागा
सुबह जा चुकी थी।

घडी मे चाभी दी
तो देता ही रह गया
स्प्रिंग टूट जाने पर ऐसा ही होता है
बिना नीद घडी सोती है
तो सोती ही रहती है
जगती है तो जगती ही रहती है
चलती है तो चलती ही जाती है।

मैने अपना सिर हिलाया
खाली बिस्कुट के डिब्बे-सा वह सो गया
गरदन हिलायी
नही हिली, अकडी थी
अकड का जमाना है
सो गयी तो सो गयी।

जल्दी-जल्दी उठा
पत्नी पर बिगड़ा
आईने मे अपनी शक्ल को
हजामत बनायी
बिना नहाये ही कपडे पहनने लगा
धुला कपडा नही मिला
गन्दा ही पहन लिया
जूते को पहले उलटा पहना
कुछ तकलीफ हुई, लेकिन नही समझा
कोट पर ब्रश नही किया
पैण्ट की क्रीज सरगपताली ही रहने दिया।
रात को कोसा
क्यो नीद नही आयी
आयी तो सुबह क्यो चली गयी

बस पर बस
आदमी पर आदमी
सडकें विधवा-सी नजर आयी
मुझे अपनी विधवा भाभी
याद आ गयी
उन्हो ने कहा था
उन का लिवर खराब है
घडी की स्प्रिंग की तरह।

रोड न० एक
काशी पुरा
बाबू काशी नाथ मर गये
याद आया
इतवार को मरे थे
आज इतवार है।



# एक गलत अनुभूति के माध्यम से दूसरा सही निष्कर्ष

मैं आज व्यस्त हूँ
क्यो कि पडा-पडा सुन रहा हूँ
पडा पडा देख रहा हूँ
पडा पडा चल रहा हूँ
लोग ग़लत कहते हैं
पडे-पडे आदमी काहिल
हो जाता है।

बाथरूम का शावर खुला है
टेप से बूँद-बूँद पानी टपक रहा है
टेबू बडा शरारती है
मेरे पास से जाने कब उठा
और जा कर बम्बे मे टपकने लगा।

मेरे बगैर उठे
दुनिया बदल गयी
बच्चे धूप मे चले गये
चारपाइया आँगन मे उलटी खडी हो गयी
मैं पडे पडे देख रहा हूँ
यह बेड रूम
ड्राइग रूम मे बदल गया
सुबह दोपहर हो गयी
कैलेण्डर की तारीख़ बदल गयी
मैं पडा-पडा देखता रहा

एक दिन दुनिया की तरह
बदल गया ।

फिर भी मैं व्यस्त रहा
पडे-पडे मै ने मालिक-मकान पर दावा किया
आँगन की सीढी टूटी है
जी मे आया
चलूँ, सीढी पर चढूँ
फिर टाग तोडूँ
( ताकि गुस्सा आये )
और तब मकान-मालिक पर दावा करूँ
लकिन कौन उठे
इस लिए पडा रहा ।

अपने बॉस को मैं ने पत्र लिखा
लिखा आप गदहे है
और रोब से फिर बोला
आप को मालूम नही
गधे मेरे हीरा है
लेकिन मै ने पत्र नही लिखा
कलम मेरे तकिये के नीचे है
और कागज बगल मे
हाथ को मैं ने परमाथ को दे दिया है
इसी लिए पडा रहा ।

बाजार मे जाने कितने मन आलू
टमाटर, पालक, सलाद बिक गये
हलवाइयो के यहा जलेबिया
और चाय वालो के यहाँ चाय
और दूध वालो का दूध बिक गया
मैं ने सर घुमाया

और सिरहाने प्याली मे चाय ठडी पडी थी
और जलेबियाँ चीटियाँ खा रही थी
मे ने हाथ नही बढाया
हाथ को मैं ने परमाथ को दे दिया है
इस लिए पडा रहा ।

उसे लगा
दूध की बोतल टूट चुकी है
और आया मर चुकी है
और रोशनी खो चुकी है
और बच्चा अकेले चौरस्ते से रेंगता
आ रहा है।

## कुछ गलत यादो के सहारे सार्थक वेदनाएँ

उस दिन शाम उदास नही थी
लेकिन वह चाहती थी—
शाम उदास लगे।
उस दिन उस की सास खुली नही थी
लेकिन उसे लगा
उस की प्रत्येक सास खुली हुई लगे

उसे किसी की याद सता नही रही थी
पर वह चाहती थी
कोई याद बन कर आये
वह कुछ गुनगुनाये।

और भी
दूर सडक से एक तेज मोटर की हार्न सुनाई दी
बिलकुल बगल के रेलवे लाइन से एक गाडी
चीखती हुई निकल गयी
कार्निस पर गौरइया अपने घोसले से निकल आयी
जँगले के परदे पर दो छिपकलियाँ
एक दूसरे से लडती नीचे गिर पडी
एक शराबी सडक से फिल्मी गाना गाता गुजर गया
दूध वाले ने सीटी बजायी
पडोस से मसाले के छौकने की बू आयी।
माली ने लॉन मे घुस आयी भैंस को गाली दी।
रेडियो से खबरें आने लगी

ससद् मे अठारह विधेयक पेश किये जाने की आशा
कच्चे तेल पर रायल्टी दर
मौसम की खबरें।

उसे लगा
जिन्दगी मे इतनी उदासियाँ कम नही हैं
जिन्दगी बिना उदास हुए भी जी जा सकती है
और
हर उदासी झेली जा सकती है।

## तीन गलत आदमी
## एक-दूसरे को समझने मे

केफे मे बैठे थे तीन
आदमी ही थे, पुतले लगते थे
सामने एक्वेरियम मे कुछ
मछलिया नीचे ऊपर आ-जा रही थी।

एक चौराहे पर गहरी खामोशी थी
वह प्याले की तह मे कुछ ढूढ रहा था
दूसरा छत की तरफ देख रहा था
तीसरा मेज पर अपने ही नाखून से आकृतिया बना रहा था।

एक क्षण  जैसे एक पहाड हो कन्धो पर
दूसरा क्षण  जैसे पत्थर पर जमी काई हो
तीसरा क्षण  जैसे भँवर मे नाचती नाव हो।

एक ने कहा—"कॉफी ठण्डी थी"
दूसरे ने कहा  "थी ?"
तीसरे ने कहा  "नही। है"

तीनो एक साथ
एक ही गुजरी अनुभूति जी रहे थे
तीनो ने कहा
हम जिस के लिए जीते हैं उसे गुजर जाने देते हैं
और तभी

कैफे की किचन से
एक काली पालतू बिल्ली निकली
उन तीनों ने देखा
उस के मुँह में एक चूहा था !



## एक गलत रोशनी
## और बदनाम लोग

बर्न्ट साइना
गेरू म काला रग अधिक
और पीले मे कुछ कम

उस ने एक सिगार जलाया
अँधेरी रात म चिनगी जली और बुझ गयी
कुछ दूर तक तैरता हुआ धुंआ फैला और डूब गया।

दूर से, नज़दीक से
अपने मे थिर स्थिरता म
सड़क नगी, काली पीठ पर
और अपने पैर के तलवो मे
उस ने एक-एक का
कई बार अपने को अनुभव किया।

लगा वह राम है
लगा वह कृष्ण है
लगा वह तपस्वी ऋषि है
लगा वह राक्षस है

उस ने एक बार अपने पर मे अपना हाथ हटाया
अँधेरे मे अपने ही ऊपर से अँधेरा हटाया

उस ने देखा
वह जो एक रोशनी है
बदनाम बेहया-सी चमकती है
और उसे लगा
वह और कोई नही
महज़ बदनाम है।



## एक सही वर्षगाँठ मनाने के गलत नतीजे

मिस्टर और मिसेज भान
लॉन मे बैठे-बैठे
अपने विवाह की वर्षगाठ मना रहे थे।
मिसेज भान ने मि० भान के लिए जूता खरीदा था
और मिस्टर भान ने मिसेज भान के लिए आलूचा
मि० भान को नया जूता काट रहा था
और मिसेज भान को आलूचे खट्टे लग रहे थे
दानो को एक दूसरे पर गुस्सा आ रहा था
दोनो एक-दूसरे को कुछ कहना चाहते थे
लेकिन
चूकि साल भर तक लगातार
दोनो अपनी-अपनी राय एक-दूसरे के प्रति
बदलते रहे थे
और दोनो एक-दूसरे से लडते झगडते रहे थे
इसलिए आज दोना सिर्फ एक बात पर
एक मत थे—
कि आज के दिन वे अपने-अपने मतभेद
अपने तक ही रखेंगे।
दोनो ने मिलकर इकतीस मोमबत्तियाँ जलायी
दोनो ने मिलकर केक काटे
दोनो ने मिलकर गुलगुले खाये
दोनो ने मिलकर जूते और आलूचे की तारीफ की
दोनो ने एक-दूसरे को भावनात्मक एकता का सन्देश दिया
दोनो ने मिलकर फेमिली प्लानिंग को गाली दी

और अपने चौबीसवें पोते के लिए खरीदे गये
पेराम्बुलेटर की लेटेस्ट डिज़ाइन की तारीफ की
दोनो ने साथ-साथ डिनर खाये
और अलग-अलग सो गये।

सुबह घर मे कोई नही था
मोमबत्तिया बुझी पडी थी
और आलूचे डस्ट-बिन में थे
जूता आँगन मे पडा था
और बासी प्लेटो को कुत्ते चाट रहे थे
क्योकि
मि० भान अपने ज़ख्मी पैर के लिए
एण्टी सेप्टिक इन्जेक्शन लगवाने
डॉ० रमेश के यहा गये थे
और मिसेज भान
अपने गोठिल दात के मसूडो से परीशान
शहर के डेण्टिस्ट डॉ० चड्ढा के यहाँ थी।

दोनो
भावात्मक एकता के रस मे
डूबे, खोये और सोये हुए थे
मि० भान कराह रहे थे
और मिसेज भान कूथ रही थी
दोनो ही
अपनी घायल पीढ़ी का
राष्ट्रीय गान गा रहे थे
एक लँगडा रहा था
एक तुतला रही थी।



# एक गलत मेहमान जो घर का आदमी था

बाहर से आने वाले सभी मेहमान माने जाते हैं
इसलिए
मैं रोज सुबह अपने घर से निकलता हूँ
और एक लम्बी यात्रा के बाद
वाया फाफामऊ घर पहुँचता हूँ
ताकि मैं अपने घर में
परदेसी मेहमान समझा जाऊँ
लेकिन
चूँकि मेरी हर रोज की यात्रा
अन्त में घर पर ही टूटती है
इसलिए मैं नहीं
मेरे घर वाले चाहते हैं कि मैं उन्हें
रोज रोज़ मेहमान समझा करूँ।

और इसी तरह
वे सब जो दूरदर्शी हैं भगवान् होते हैं
इसलिए
एक लम्बी दूरबीन लगाकर जब मैंने
अपने ही शहर को देखा
तो लगा मैं अपने ही शहर से बहुत दूर हूँ
और इस नगर के बीचोबीच
चौराहे पर अपने-आप आ-जा रहा हूँ
और मैं ही
अपने शहर का मेहमान हूँ
और दूरदर्शी हो सकता हूँ

इसलिए मैं ही स्वय
अपना भगवान् हूँ ।
लेकिन—
जैसे ही मै अपने को भगवान् समझ
दूरबीन और आगे बढाता हूँ
सारा शहर मुझे समाया हुआ-सा लगता है
और मै केवल एक अस्तित्वहीन
निर्जीव ममी-सा
अपने भीतर एक विशाल मरी हुई सस्कृति
एक गुलामो की परम्परा
और सम्राटो की लाश वाला
पिरामिड की पर्तों मे दफनाया हुआ-सा लगता हूँ
और तब
मैं रोज सुबह अपने घर से निकलता हूँ
और एक लम्बी यात्रा के बाद
थाया फाफामऊ घर पहुँचता हूँ
ताकि मैं अपने घर मे
परदेसी मेहमान समझे जाने की आकाक्षा
लिये रोज रोज
बिना मरे
जिन्दा घर वापस आ जाया करूँ
और मेरे घर वाले मुझ से यह आशा
किया करें
कि आज नही तो कल
मै उन्हे मेहमान समझूगा ।



# एक गलत परिवेश के कुछ सही निष्कर्ष

एक गन्दे कपडे को
एक चादर समझ
मैंने जब अपनी पीठ को
सहारा दिया
शहर की लम्बी सडको पर
शहतीर-सी लम्बी रातो मे
एक बहुत बडा सूराख किया

देखा
अस्पताल की चहारदीवारी पार कर
रबर की उँगलिया और कैंचिया उठा
कोई एक बेतहाशा भागा जा रहा है
चौराहे पर एक होटल है
जिस की नाली से सडा हुआ दूध बह रहा है ।

वहाँ एक छोटा-सा स्कूल है
जिस मे हर रोज
कोई-न-कोई बच्चा एक अपराधी की शकल मे ढल रहा है
तुम्हे भी क्या मालूम
तेरी लूसी कल नायिका बनेगी
परसो माँ
नरसो वह पागल होगी
और ठीक उस के बाद वह मर जायेगी ।



अतुकान्त

# १९५३

सिर पर जूता
पैर मे टोपी
बीच कमर मे उलटी ऐनक
हाथो मे उलटे पाजामे
कोट की बाह उलटी-सीधी
माथे पर टाई की पट्टी
बीच गले मे गेलिस पेटी
गली उँगलिया मे रुमाल का गन्दा पर्दा
सिर पर काले फीते बाधे
नाक-कान मे रुई ठुसे
आख तिरछी      ऐंची-बैंची
अधर जीभ पर काला पर्दा
एक इकहरा घना लबादा
पेन्सिलीन की, सोबाजाल की
विटामिन्स की, टिकिया, बोतल
लादे फाँदे, घायल-घायल
बेसुध, अनमन
वह देखो आया सन तिरपन !

## आदि से अन्त तक केवल अतुकान्त

श्रीमान्
श्री श्री श्री लक्ष्मीकान्त
बाल बिखरे
गाल पिचके
निष्प्रभ
क्लान्त
आदि से अन्त तक
केवल अतुकान्त
श्रीमान्
श्रीयुत
श्री श्री श्री लक्ष्मीकान्त।

कवि हो
छन्द नही, लय नही
केवल गति
पैराशूट

भूत हो यार
हबशी अनाडी बच्च फूहड
काव्य, कवि, कविता मे अनभिज्ञ
एक झूठा सा कलेवर
आद्योपान्त।

( जानते हो, ताप क्या था
आदि कवि की भावना का
क्रौंच जब घायल गिरा था—
काव्य से रस-स्निग्ध चरणों पर ? )
झूठे नव्वाज़
कलावाज़
रस्सी पर नाचने वाले नट हो
नृत्यहीन।

जानते हो—
परमाणुओं में नाद कितना
ज्योति कितनी
नृत्य कितना है अँधेरे में
सौर चक्र-व्यूह में वह कौन-सा रव है
कि जिस से एक गति अविचल विरत है
क्रम बद्ध
सचित भावना से हीन

तुम कलह
आक्रान्त स्वर सक्रान्त
वितरित कर रहे हो जन्म
औ सन्दिग्धता उद्भ्रान्त
श्रीमान्
श्री श्री श्री लक्ष्मीकान्त

कम्बख्त हो जी
सड़क पर छकड़ा भरा है
कूड़ा-करकट लाद लो
पाट दो उस मच्छरों से भरी खाईं को—
कि जो उस जुही की कलिका निकट है

मन्द सौरभ को मिटाने में सबल है
यह क्रूर अत्याचार
व्यथा ?
" अनाचार।

[ हटाओ भी यार
ससार मे शिव ही शिव है
सत्य से भयभीत कोई मत नही है
सभी शिव है सदा शिव ]

सामने होली खडी है
एक बोतल, एक प्याली
प्याज की पकौडी
इक्के-ताँगे वालो की गाली
मस्ती
फाकामस्ती
पस्ती
सरसता मे दस्ती पैग़ाम
सत्य शिव है
रे मतान्त
शान्त शान्त चिर अशान्त
अस्त-व्यस्त
जीवन की गठरी का भार
चिर अशान्त
चिर अशान्त
चिर अशान्त
चिर अशान्त
श्रीमान्
श्रीयुत
श्री श्री लक्ष्मीकान्त !

कमीज के बटन
बटन-होल से बाहर जो
दांत निकाले-से पड़े हैं
उन्हे समेट लो
आस्तीन के कॉलर
कोट की सीमा से बाहर मत जाने दो
गाल पिचके
बाल बिखरे
फूल कर
तन कर
बैठो न
कमर झुकी,
चिन्तित-सा देख तुम्हे
देखने वाले देखेंगे
महज देखेंगे
हँसी 'मजाक ताने व्यग्य
अह हा हा हा
भयावह
भयकर
मरणासन्न
अन्तर क्या ?

हुआ क्या ?
जो भी है देख लो
मैं नग्न हूँ नग्न
गति-लीन
अति प्रच्छन्न
हृदय की धड़कन
और जोवन ?
बोरसी है गरीब की
आच नहो
जल

आदि से अन्त तक

लक्ष्मीकान्त वर्मा

जन्म सन् १९२२, रम्सी (उ० प्र०) म। शिक्षा उर्दू फारसी स प्रारम्भ और लिखना हिन्दी स। जीवन क प्रथम पन्द्रह वर्ष राजनीति क कोलाहल म, पिछले तीस वर्षों स केवल स्वतन्त्र लेखन और मन्थन अनुशीलन म सलग्न। चित्रकला, रगमच, उर्दू गजल स ले कर कथा-कहानी-उपन्यास, निबन्ध आलोचना और नाटक-कविता आदि सभी साहित्यिक विधाओं म सक्रिय रुचि। [illegible]

[illegible]। 'नये पत्ते', 'निकष' और 'क ख ग' का सम्पादन।

कृतियाँ नय प्रतिमान पुरान निकष, आदमी का जहर, नयी कविता क प्रतिमान, खाली कुरसी की आत्मा, धुएँ की लकीरें, सामान्त क बादल, और यह 'अतुकान्त'।

• •